॥ श्रीः ॥

मन्त्रशास्त्रान्तर्गतं

लंकापति-रावणविरचितम्.

उड्डीशतन्त्रम्.

(पार्वतीश्वरसंवादरूपम्)

लखीमपुरस्थसंस्कृतपुस्तकालयस्वामि-पंडित नारायणप्रसाद-मुकुन्दराम-विरचितया भाषाटीकया समलंकृतम् ।

वह

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासने अपने " लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापेखानेमें छापकर प्रसिद्ध किया.

संवत् १९५५, शके १८२०.

कल्याण-मुंबई.

॥ पार्वतीश्वरौवंदे ॥

पार्वती शंकर

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

प्रस्तावना ।

उड्डीशं यो न जानाति स रुष्टः किं करिष्यति ॥

जो मनुष्य उड्डीशतंत्रको नहीं जानता है, वह किसीपर क्रोध करके क्या कर सकेगा, उड्डीशतंत्र चार प्रकारका है, १ शिवउड्डीश, २ भैरवउड्डीश, ३ रावणउड्डीश, ४ मेघनादउड्डीश । १ श्रीशिवजीमहाराजने दत्तात्रेयजीके प्रति जो तंत्र वर्णन किया है उसको शिवउड्डीश तथा दत्तात्रेयतंत्रभी कहते हैं । २ भैरवजीका कहा भया उड्डीशतंत्र भैरवउड्डीश करके प्रसिद्ध है । ३ श्रीशिवजीने पार्वतीप्रति जो तंत्र वर्णन किया उसको रावणने अपनी वाणीसे प्रकाशित किया उसको रावणउड्डीश कहते हैं । ४ मेघनादके कहे उड्डीशका नाम मेघनादउड्डीश है । अब इनमेंसे शिवउड्डीश अर्थात् दत्तात्रेयतंत्र छपकर प्रकाशित हो चुका है और भैरवउड्डीशकी खोज की जाती है और रावणउड्डीश

यह आपके करतलमें है तथा मेघनादकृत उड्डीशतंत्रमें सम्पूर्ण प्रयोग राक्षसी प्रकारसे वर्णन किये गये हैं जो मनुष्यधर्मके विरुद्ध है, इस कारण छपनेके योग्य नहीं है, इस रावणकृत उड्डीशका नाम तो सहस्रों पंडितोंको मालूम होगा परंतु इसके प्रकाश करनेके निमित्त इसकी खोजमें बहुत दिन व्यतीत हुए, किसी पंडितके पास न प्राप्त होनेके कारण इस ग्रंथके प्रकाश करनेसे हम वंचित रहे, यद्यपि अनेक ग्राहकोंके मांगनेपर हम इस पुस्तककी खोज सर्वदा करते रहे और अबतक इस तंत्रकी खोजमें थे तबतक स्वरोदय विद्याके परमप्रेमी सारस्वतवंशभूषण वैद्य दुर्गाप्रसादजी तिनके पुत्र ज्योतिर्वित्पण्डित भैरवप्रसादजी तिन्होंने अपने फुफेरे भाई पंडित श्यामसुन्दरलाल खैराबाद निवासीसे यह उड्डीशतंत्र प्राप्त करके हमारेको लाकर दिया, यद्यपि यह प्राचीन लिखा ग्रन्थ अनेकानेक अशुद्धियोंसे पूरित था, तथापि हमने यथाबुद्धि शुद्ध करके यथोचित भाषानुवादसे विभूषित कर दिया है इस तंत्रमें

१० पटल हैं, जो दशमुख रावणने अपने एक एक मुखसे एक एक पटल वर्णन किया है तहां:—

१ प्रथम पटलमें—मारणप्रयोग वर्णन किया है।
२ द्वितीय पटलमें—अश्वनाशनादि प्रकार वर्णन है।
३ तृतीय पटलमें—मोहनप्रयोग वर्णन है।
४ चतुर्थ पटलमें—स्तम्भनप्रयोग वर्णन है।
५ पंचम पटलमें—विद्वेषणप्रयोग वर्णन है।
६ षष्ठ पटलमें—उच्चाटनप्रयोग वर्णन है।
७ सप्तम पटलमें—वशीकरणप्रयोग वर्णन है।
८ अष्टम पटलमें—आकर्षणप्रयोग वर्णन है।
९ नवम पटलमें—यक्षिणीसाधनप्रकार वर्णन है।
१० दशम पटलमें—इन्द्रजालकौतुक तथा शिवाबलिविधान वर्णन है।

इस प्रकार इन दश पटलोंसे विभूषित यह अत्युत्तम तंत्र तंत्रोंमें शिरोमणि—लंकापतिरावणकी वाणीसे प्रकाशित पंडितोंका शस्त्रास्वरूपग्रन्थ है, इस ग्रन्थका सम्पूर्ण

वेदबाणांकचन्द्रेन्द्वे भाद्रे मासि सिते दले ॥
तृतीयायां सोमवारे भापारम्भः कृतो मया ॥ १ ॥

समस्त तंत्ररसिकोंका परमहितैषी-
पंडित नारायणप्रसाद मुकुन्दरामजी
संस्कृतपुस्तकालय-बाँसबरेली
और लखीमपुर (अवध)

॥ श्रीः ॥

अथ लंकापतिरावणविरचितं

उड्डीशतंत्रम्।

भाषाटीकासहितं।

मंगलाचरणम् ।

यस्येश्वरस्य विमलं चरणारविन्दं संसेव्यते विबुधसिद्धमधुव्रतेन ॥ निम्र्माणशातकगुणाष्टकवर्गपूर्णं तं शङ्करं सकलदुःखहरं नमामि ॥ १ ॥

अर्थ-जिस ईश्वरके निर्मल चरणकमलोंको सम्पूर्ण देवता और सिद्धगण मधुकररूपसे सेवन करते हैं तथा जो सम्पूर्ण जगत्के उत्पत्ति, पालन, प्रलय करनेहारे और अष्टांगयोग, चारों वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) इन करके परीपूर्ण है. तिन सम्पूर्ण दुःखोंके नाश करनेहारे शंकरजीको नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

ग्रंथारंभः ।

उड्डीशेन समाकीर्णे योगिवृन्दसमाकुले ॥
प्रणम्य शिरसा देवी गौरी पृच्छति शंकरम् ॥ १॥
ईश्वर श्रोतुमिच्छामि लोकनाथ जगत्पते ॥
प्रसादं कुरु देवेश ब्रूहि कामार्थसाधनम् ॥ २ ॥

अर्थ—योगियोंके समूहमें बैठे हुए श्रीशिवजीको शिरसा प्रणाम करके श्रीपार्वतीजी जगत्का कल्याण करनेवाले महादेवको पूछती है ॥१॥ हे ईश्वर लोकनाथ जगत्के स्वामी! हम सुननेकी इच्छा करती हैं, सो हे देवेश! प्रसन्न होकर सम्पूर्ण कामना तथा अर्थसाधन वर्णन करो ॥ २ ॥

ईश्वर उवाच ॥ शृणु तत्वं वरारोहे सिद्ध्यर्थं यत्प्रयच्छति ॥ तद्वदिष्यामि देवेशि सर्वं यत्समुदाहृतम्॥३॥देवि प्रयोगमंत्रैश्च रिपुं हन्यान्न संशयः ॥ उड्डीशाख्यमिदं तंत्रं कथयामि सुभक्तितः ॥ ४ ॥

अर्थ—श्रीशिवजी कहते हैं—हे वरारोहे (पार्वति)! तुम सुनो सिद्धिके अर्थ जो कुछ वर्णन किया गया है, सो

हे देवेशि ! सम्पूर्ण प्रयोग वर्णन करूंगा ॥ ३ ॥ हे देवि । इसमें कहे हुए प्रयोग तथा मंत्रोंसे निःसन्देह शत्रुका नाश हो जाता है, यह उड्डीशनामका तंत्र हम तुह्मारी भक्तिसे वर्णन करते हैं ॥ ४ ॥

वक्ष्ये मयोद्भवान्योगान्सर्वशत्रुविनाशकान् ॥
यैस्तु प्रयोजितैः सद्यः प्राणान् हंति न संशयः॥५॥
भूतानां कर्षणं चादौ द्वितीयोन्मादनं तथा ॥
विद्वेषणं तृतीयं च चतुर्थोच्चाटनं तथा ॥ ६ ॥

अर्थ–श्रीशिवजी बोले कि हम करके उत्पन्न प्रयोग सम्पूर्ण शत्रुओंको नाश करनेवाले कहूंगा, जिन प्रयोगोंके करनेसे शीघ्र निःसन्देह शत्रुओंका नाश होवे है ॥ ५ ॥ उनमेंसे प्रथम भूतकर्षण, दूसरे उन्मादन, तीसरे विद्वेषण, चौथे उच्चाटन ॥ ६ ॥

ग्रामस्योच्चाटनं पंच जलस्तंभं च षष्ठकम् ॥
स्तंभनं सप्तमं चैव वशीकरणमष्टमम् ॥ ७ ॥

अन्यानपि प्रयोगांश्च बहून् शृणु वरानने ॥
शिवेन कथिता योगा उड्डीशे शास्त्रनिश्चये ॥ ८ ॥

अर्थ—पांचवें ग्रामका उच्चाटन, छठे जलका स्तंभन, सातवें स्तंभन, आठवें वशीकरण ॥ ७ ॥ अन्यभी बहुतसे प्रयोग मुझ शिव करके कहे भये उड्डीशनामक निश्चय शास्त्रमें हैं सो हे वरानने (पार्वति) । श्रवण करो ॥ ८ ॥

अंधीकरणं मूककरणं गात्रसंकोचनं तथा ॥
बधिरीलूककरणं भूतज्वरकरं तथा ॥ ९ ॥
मेघानां स्तंभनं चैव दध्यादिकविनाशनम् ॥
मत्तोन्मत्तकरं चैव गजवाजिप्रकोपनम् ॥ १० ॥
आकर्षणं भुजंगानां मानवानां तथैव च ॥
सस्यादिनाशनं चैव परग्रामप्रवेशनम् ॥ ११ ॥

अर्थ—अंधीकरण, मूककरण, गात्रसंकोचन, बधिरीकरण, लूककरण तथा भूतज्वरकरण ॥९॥ मेघोंका स्तंभन, दधिआदिपदार्थोंका विनाश, मत्त तथा उन्मत्तकरण, हाथी घोडेका प्रकोपन ॥ १० ॥ सर्पोंका आकर्षण तथा मनु-

ष्योंका आकर्षण, सस्यादिका नाशन और सस्य (धान्य) आदिका नाशन व पराये पुरमें प्रवेश करना ॥ ११ ॥

वेतालादिकसिद्धिं च पादुकांजनसिद्धयः ॥
अन्यान्बहूँस्तथा रौद्रान् विद्यामंत्रांस्तथापरम् १२
औषधं च तथा गुप्तं कार्यं वक्ष्यामि यत्नतः ॥
गुप्ता गुप्ततरा कार्या रक्षितव्या प्रयत्नतः ॥ १३ ॥
उड्डीशं यो न जानाति स रुष्टः किं करिष्यति ॥
मेरुं चालयते स्थानात्सागरं प्लावयेन्महीम् ॥१४॥

अर्थ-वेताल आदिकी सिद्धि और पादुका व अंजन-सिद्धि, अन्यभी बहुत प्रयोग तथा रौद्रविद्या ॥ १२ ॥ तथा गुप्त औषधियोंको यत्नपूर्वक कहूंगा, गुप्तसे गुप्त इस विद्याको गुप्त करे और यत्नसे रक्षा करे ॥ १३ ॥ जो मनुष्य उड्डीशतंत्रको नहीं जानता है सो क्रोध करके क्या कर सकेगा, जिस तंत्रके बलसे स्थानसे मेरुको चलाय देवे और समुद्रको पृथिवीमें लय कर देवे ॥ १४ ॥

अकुलीनोऽधमोबुद्धिर्भक्तिहीनः क्षुधान्वितः ॥
मोहितः शंकितश्चापि निन्दकश्च विशेषतः ॥१५॥
अभक्ताय न दातव्यं तंत्रशास्त्रमनुत्तमम् ॥
तथैतैस्सह संयोगे कार्यं नोड्डीशकीध्रुवम् ॥ १६ ॥
क्रियाभेदं च कुर्वीत किमत्र बहुभाषिते ॥ १७ ॥

अर्थ–जो अकुलीन हो तथा जिसकी बुद्धि अधम हो, भक्तिहीन, क्षुधायुक्त, मोह तथा शंकासे युक्त हो व निन्दक हो ॥ १५ ॥ और अभक्त इन सबके अर्थ यह तंत्रविद्या नहीं देनी तथा इनके साथ निश्चय करके उड्डी-शतंत्रमें लिखित विधियुक्त ॥ १६ ॥ कियाको नहीं कर-ना, यहां अधिक और क्या कहा जाय ॥ १७ ॥

यदि रक्षेत्सिद्धिमेतामात्मानं च तथैव च ॥
सुपुरुषाय दातव्यं देवतागुरुभक्तये ॥ १८ ॥
तपस्विबालवृद्धानां तथा चैवोपकारिणाम् ॥
निश्चये सुमतिं प्राप्य यथोक्तं भाषितानि च॥१९॥

अर्थ–जो इस तंत्रसिद्धि तथा अपने आत्माकी रक्षा

करना चाहे तो सज्जन, देवता व गुरुभक्तके अर्थ यह तंत्र विद्या देवे ॥ १८ ॥ और तपस्वी, बाल (विद्यार्थी), वृद्ध तथा उपकारी जनोंको तथा जिनकी तंत्रविद्यामें सुन्दर मति व तंत्रमें जिनका निश्चय यथार्थ भाषण करनेवाले हैं उनको यह विद्या देना ॥ १९ ॥

न तिथिर्न च नक्षत्रं नियमो नास्ति वासरः ॥
न व्रतं नियमं होमं कालवेलाविवर्जितम् ॥ २० ॥
केवलं तंत्रमात्रेण ह्यौषधी सिद्धिरूपिणी ॥
यस्य साधनमात्रेण क्षणात्सिद्धिश्च जायते ॥ २१ ॥

अर्थ-इस तंत्रमें लिखित प्रयोगोंके करनेमें न तिथि, न नक्षत्र, न वारका नियम है तथा न व्रतका नियम, न हवनका नियम है और समय आदिका नियमभी नहीं है ॥२०॥ केवल तंत्रमात्रसे सम्पूर्ण औषधी सिद्धस्वरूपिणी है, जिसके साधनमात्रसे क्षणमें सिद्धि होती है ॥ २१ ॥

मारणं मोहनं स्तंभं विद्वेषोच्चाटनं वशम् ॥
एषां सिद्धिं प्रयच्छामि पार्वति शृणु यत्नतः २२॥

शशिहीना यथा रात्री रविहीनं यथा दिनम् ॥
नृपहीनं यथा राज्यं गुरुहीनं न मंत्रकम् ॥ २३ ॥

अर्थ–मारण, मोहन, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन, वशीकरण इन ६ प्रयोगोंकी सिद्धिको वर्णन करूंगा सो हे पार्वति! सावधान हो श्रवण करो ॥ २२ ॥ जैसे चंद्रमा विना रात्री, सूर्य विना जैसे दिन, राजा विना जैसे राज्य तैसेही गुरु विना मंत्रसिद्धि नहीं होती ॥ २३ ॥

इन्द्रस्य च यथा वज्रं पाशं च वरुणस्य च ॥
यमस्य च यथा दंडं वह्लेरशक्तिर्यथा दहेत् ॥ २४॥
तथैवैते महायोगाः प्रयोज्योद्यमकर्मणे ॥
सूर्यं प्रपातयेद्भूमौ नेदं मिथ्या भविष्यति ॥२५॥

अर्थ–जैसे इन्द्रका वज्र वरुणकी फसरी जैसे यमका दंड तथा अग्निकी शक्ति दाह करनेकी है ॥ २४ इसी प्रकार षट्प्रयोगोंमें यह तंत्र शीघ्र सिद्धिके अर्थ प्रयोजित करे इसके बलसे सूर्यको पृथिवीपर गिराय देवे यह मिथ्या नहीं है ॥ २५ ॥

अपकारेषु दुष्टेषु पापिष्ठेषु जनेषु च ॥
प्रयोगैर्हन्यमानेषु दोषो नैव प्रजायते ॥ २६ ॥
योजयेदनिमित्तं य आत्मघाती न संशयः ॥
असन्तुष्टः प्रयोगो यः शास्त्रमेतन्न सिद्धिदम् ॥२७॥

अर्थ-अपकार करनेवाले तथा दुष्ट, पापी मनुष्योंपर मारणादि प्रयोग करनेसे दोष नहीं होता है ॥ २६ ॥परंतु जो मनुष्य निष्प्रयोजन प्रयोग करता है वह आत्मघाती जानना, जो असन्तोषी होकर प्रयोग करता है उसको यह तंत्रशास्त्र सिद्धिका देनेवाला नहीं होता है ॥ २७ ॥

अथ मारणम् ॥ ईश्वर उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं मारणाभिधम् ॥
सद्यःसिद्धिकरं नृणां पार्वति शृणु यत्नतः ॥२८॥
मारणं न वृथा कार्यं यस्य कस्य कदाचन ॥
प्राणांतसंकटे जाते कर्तव्यं भूतिमिच्छता ॥२९॥

अर्थ-अब मारणप्रयोग लिखते हैं-श्रीशिवजी कहते हैं, कि अब हम मारणप्रयोगको प्रथम वर्णन करेंगे सो हे

गौरि ! शीघ्र सिद्धि करनेवाले मनुष्योंको हितकर प्रयोग सावधान होकर श्रवण करो ॥ २८ ॥ यह मारणप्रयोग वृथा नहीं करना अर्थात् जिस किसीपर सहसा यह प्रयोग करना योग्य नहीं, प्राणांत संकट होनेपर अपने कल्याणकी इच्छासे मारणप्रयोग करना योग्य है ॥ २९ ॥

ब्रह्मात्मानं तु विततं दृष्ट्वा विज्ञानचक्षुषा ॥
सर्वत्र मारणं कार्यमन्यथा दोपभाग्भवेत् ॥ ३० ॥
मूर्खेण तु कृते तंत्रे स्वस्मिन्नेव समापयेत् ॥
तस्माद्रक्ष्यं सदात्मानं मारणं न क्वचिच्चरेत्॥३१॥
कर्तव्यं मारणं चेत्स्यात्तदा कृत्यं समाचरेत् ॥

अर्थ–जब ब्रह्मज्ञानी पुरुष अपने ज्ञाननेत्रोंसे सर्वत्र ब्रह्मही व्याप्त हो रहा है ऐसा दीखता है, तब कोई अत्यंत आवश्यक कार्यार्थ किया जाय तो ठीक है, अन्यथा अर्थात् जो ऐसा नहीं जानता उसको महान् दोप प्राप्त होवे है ॥ ३० ॥ मूर्ख मनुष्यने अपनी अज्ञानतासे मारण प्रयोग किया, तो अपनेही ऊपर पडता है, इस कारण जो

अपने शरीर चाहे तो मारण प्रयोग कभी नहीं करे॥३१॥
जो कदाचित् मारण करनाही होवे तो इस प्रकारसे करना॥

मृत्तिकारिपुपादाभ्यां पुत्तली क्रियते नरः ॥
चिताभस्मसमायुक्तं मध्यमारुधिरं तथा ॥ ३२ ॥
कृष्णवस्त्रेण संवेष्ट्य कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ॥
कुशासने सुतमूर्तिर्दीपं प्रज्वालयेत्ततः ॥ ३३ ॥
अयुतं प्रजपेन्मंत्रं पश्चादष्टोत्तरं शतम् ॥
मंत्रराजप्रभावेण माषांश्चाष्टोत्तरं शतम् ॥ ३४ ॥
पुत्तिकामुखमध्ये च निक्षिपेत्सर्वमापकान् ॥
अर्धरात्रिकृते योगे शक्रतुल्योपि मारयेत् ॥ ३५॥
प्रातःकाले पुत्तलिकां स्मशानांते विनिःक्षिपेत् ॥
मासैकेन प्रयोगेण रिपोर्मृत्युर्भविष्यति ॥ ३६ ॥

अथ शत्रुमारणमंत्रः ।

ॐसर्वकालकसंहाराय अमुकस्य हन हन क्रीं
हूं फट् भस्मीकुरु स्वाहा ॥

अर्थ-शत्रुके चरणतलोंकी मिट्टी लाकर मनुष्याकार

तथान्यच्च ।

नरास्थिकीलकं पुष्ये गृह्णीयाच्चतुरंगुलम् ॥
निखनेत्तु गृहे यावत्तावत्तस्य कुलक्षयः ॥ ४० ॥
मंत्रः ॐ ह्रीं फट् स्वाहा ॥ अयुतजपात्सिद्धिः ॥

अर्थ-पुष्यनक्षत्रके दिन मनुष्यके हाडकी चार अंगुलकी कीलको लेके जिसके घरमें दाबकर रक्खी जावे, जबतक वह रक्खी रहे तबतक उसका कुलक्षय होता है॥ ४०॥ ॐ ह्रीं फट् स्वाहा, इस मंत्रका जप दश हजार करना, यह सर्वत्र क्रम है, कि जिस मंत्रका पुरश्चरण करे उसके जपकी संख्यासे दशांश हवन, तद्दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन, तद्दशांश ब्राह्मणभोजन यह परमोत्तम क्रम सिद्धिदायक है ॥

तथाच ॥ ॐ सुरेश्वराय स्वाहा ॥
सर्पास्थ्यंगुलमात्रं तु चाश्लेषायां रिपोर्गृहे ॥
निखनेच्छतधा जप्तं मारयेद्रिपुसन्ततिम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-ॐ सुरेश्वराय स्वाहा, इस मंत्रसे सर्पके हाडकी

कील एक अंगुलमात्र लेके आश्लेषानक्षत्रमें एक सौ आठ वार मंत्रसे अभिमंत्रित करके शत्रुके घरमें रखनेसे शत्रुकी सन्ततिका नाश होवे है ॥ ४१ ॥

अश्वास्थिकीलमश्विन्यां निखतेच्चतुरंगुलम् ॥
शत्रुगृहे निहन्त्याशु कुटुम्ववैरिणां कुलम् ॥ ४२॥
मंत्रस्तु ॥ हुं हुं फट् स्वाहा ॥ सप्ताभिमंत्रितं कृत्वा निखनेत् ॥

अर्थ–घोडेके हाडकी कील चार अंगुल अश्विनीनक्षत्रमें लेकर शत्रुके घरमें दाबकर रख देवे तो शीघ्र शत्रुओंका कुल नाशको प्राप्त होता है ॥ हुं हुं फट् स्वाहा, इस मंत्रसे सात वार अभिमंत्रित करके कीलको रक्खे ॥४२॥

आर्द्रायां निम्बवन्दाकं शत्रोः शयनमन्दिरे ॥
निखनेन्मृतवच्छत्रुरुद्धते च पुनः सुखी ॥ ४३ ॥
तथा शिरीषवन्दाकं पूर्वोक्तेनोडुना हरेत् ॥
शत्रोर्गेहे स्थापयित्वा रिपोर्नाशो भविष्यति॥४४॥

अर्थ–आर्द्रानक्षत्रमें नींबके वृक्षका बांदा लाकर

दिन लावे, फिर उसको गोमूत्रसे सींचकरके शत्रुकी मूर्ति बनावे ॥ ४९ ॥ और निर्जन वनमें नदीके किनारे वेदी बनाकरके उसके ऊपर मूर्तिको स्थापित करे अर्थात् सीधी सुला देवे, अनन्तर अतिदारुण लोहेका त्रिशूल उसकी छातीमें गाड देवे ॥ ५० ॥ और उसके बांई ओर वेदीपर कालभैरवको स्थापित करे. प्रतिदिन यथोक्त विधिसे बलिदान और पूजन करे ॥ ५१ ॥

एकादशवटूंस्तत्र परमान्नेन भोजयेत् ॥
अखण्डदीपं तस्याग्रे कटुतैलेन ज्वालयेत् ॥५२॥
व्याघ्रचर्मासनं कृत्वा निवसेत्तस्य दक्षिणे ॥
दक्षिणाभिमुखो रात्रौ जपेन्मंत्रमतन्द्रितः ॥ ५३ ॥

अर्थ—अनन्तर ११ बालक ब्राह्मणोंके वहाँपर श्रेष्ठ अन्न (क्षीरान्न, खीर) से कुमारोंको भोजन तृप्तिपर्यन्त करावे, भैरवके आगे सरसोंके तेलका अखण्डदीप जलावे ॥ ५२ ॥ और तिस शत्रुकी मूर्तिके दक्षिणभागमें व्याघ्रांबरको बिछाय उसपर आप दक्षिण मुख करके बैठे,परन्तु

रात्रिसमय यह प्रयोग करना श्रेष्ठ है आलस्यको छोडक-
र सावधानचित्त होके मंत्रका जप करे ॥ ५३ ॥

अथ मंत्रः ॥ ॐ नमो भगवते महाकालभैरवाय
कालाग्नितेजसे अमुकं मे शत्रुं मारय २ पोथय २
हुं फट् स्वाहा ॥ अयुतं प्रजपेदेनं मंत्रं निशि समा-
हितः॥ एकोनत्रिंशद्दिवसैर्मारणं जायते ध्रुवम् ॥५४

अर्थ–ॐ नमो भगवते ० इत्यादि मंत्रका जप दश हजार
करे सावधान होकर रात्रिसमय यह उपाय करे, इस
प्रकार२९ दिन प्रयोग करनेसे निश्चय मृत्यु होवे है॥५४॥

तथाच आर्द्रपटीविद्या ॥

रहस्यातिरहस्यं च कौतुकं कथितं शृणु ॥
आर्द्रपटेश्वरीविद्या कथिते शत्रुनिग्रहे ॥

अथ मंत्रः ॥

क्रीं नमो भगवति आर्द्रपटेश्वरि हरितनीलपटे
कालि आर्द्रजिह्वे चांडालिनि रुद्राणि कपालिनि
ज्वालामुखि सप्तजिह्वे सहस्रनयने एहि एहि

अमुकं ते पशुं ददामि अमुकस्य जीवं निकृन्तय एहि तर्म्भावितापहारिणीं हुं फट् भूर्भुवः स्वः फट् रुधिरार्द्रवसाखादिनि मम शत्रून् छेदय छेदय शोणितं पिब २ हुं फट् स्वाहा ॥

ॐ अस्य श्रीआर्द्रपटीमहाविद्यामंत्रस्य दुर्वासा ऋषिर्गायत्री छन्दः हुं बीजं स्वाहा शक्तिः ममामुकशत्रुनिग्रहकाम्यार्थे जपे विनियोगः ॥

केवलं जपमात्रेण मासान्ते शत्रुमारणम् ॥
ततः कृष्णाष्टमी यावत् तावत्कृष्णचतुर्दशी॥८५॥
शत्रुनामसमायुक्तं तावत्कालं जपेन्मनुम् ॥
मृत्तिकारिपुपादेन पुत्तलिकां क्रियते नरः ॥
अजापुत्रबलिं दत्त्वा तद्रक्ते वस्त्रं संलिपेत् ॥ ८६ ॥
तद्वस्त्रं गृहीत्वा पुत्तलिकोपरि निदध्यात् मंत्रं जपेत्, यावद्वस्त्रं शुष्यति तावच्छत्रुर्यमालयं व्रजति ॥ मंत्रराजप्रभावेनात्र कार्या विचारणा ॥
यमालये व्रजेच्छत्रुर्मुकुन्दसदृशोऽपि वा॥८७॥

अर्थ-अब मारणप्रयोग विषयमें आर्द्रपटी विद्या वर्णन करते हैं हे पार्वति ! गुप्तसे गुप्त कौतुक कहते हैं सो श्रवण करो, यह आर्द्रपटेश्वरीविद्या शत्रुनाशार्थ वर्णन करी गई ॐ नमो भगवति आर्द्रपटेश्वरि० इत्यादि मंत्र है इस मंत्रका केवल जप मात्र करनेसे एक महीनेमें शत्रुमरण होवे है अर्थात् एक मासपर्यन्त नित्य १०८ मंत्र जपे, अनन्तर कृष्णपक्षकी अष्टमीसे लेके कृष्णचतुर्दशीपर्यन्त ॥ ५५ ॥ शत्रुके नामसहित सावधान मन होकर मंत्रको जपे १०८ मंत्र नित्य जपे, अंतदिवसमें यह विधि करे,सो क्या कि, शत्रुके चरणतलकी मृत्तिका लेकर शत्रुकी पुतलिका बनावे, नीलवस्त्रसे लपेटकर मंत्रपूर्वक प्राणप्रतिष्ठा कर, कालीका पूजन करके, बकरेका बलिदान करके उसके रक्तमें वस्त्रको भिगोय लेवे ॥ ५६ ॥ फिर उस वस्त्रको पूतलीके ऊपर उढाय मंत्रका जप करे, जबतक वह वस्त्र सूखे तबतक शत्रुका प्राण यमपुरको गमन करे है इस आर्द्रपटेश्वरीविद्यामंत्रके प्रभावसे मुकुन्द

(कृष्ण) के समानभी शत्रु होवे तोभी यमालयको जाता है, इसमें सन्देह नहीं करना यह प्रयोग सत्यही है ॥५७॥

अथ वैरिमारण (काली) कवचम् ॥ देव्युवाच ॥
भगवन्सर्वदेवेश देवानां भोगद प्रभो ॥
प्रब्रूहि मे महादेव गोप्यं यद्यपि च प्रभो ॥ ५८ ॥
शत्रूणां येन नाशः स्यात् आत्मनो रक्षणं भवेत् ॥
परमैश्वर्यमतुलं लभेदनहितं वद ॥ ५९ ॥
ईश्वर उवाच-वक्ष्यामि ते महादेवि सर्वधर्मविदांवरे॥
अद्भुतं कवचं देव्याः सर्वकामप्रसाधकम् ॥ ६० ॥
विशेषतः शत्रुनाशमात्मरक्षाकरं नृणाम् ॥
सर्वारिष्टप्रशमनं व्यभिचारविनाशनम् ॥ ६१ ॥
सुखदं भोगदं चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥
शत्रुसंघाः क्षयं यान्ति भवन्ति व्याधिपीडिताः६२
दुःखिनो ज्वरिताश्चैव स्वाभीष्टप्रच्युतास्तथा ॥
तदग्रे कथयिष्यामि पार्वति शृणु यत्नतः ॥ ६३ ॥

अर्थ-अब वैरिमारण (काली) कवच लिखते हैं,

श्रीपार्वतीजी साक्षात् शिवजीसे प्रश्न करती है, कि हे भगवन्! सर्वदेवेश! देवताओंको भोग देनेवाले प्रभो हे महादेव! यद्यपि छिपानेके योग्य प्रयोग हैं तथापि हमारेसे आप वर्णन करो ॥ ५८ ॥ जिस प्रयोगसे शत्रुगणोंका नाश होवे और अपने आत्माकी रक्षा होवे तथा महान् ऐश्वर्य अतुल भोग प्राप्त होवे सो आप हमारे हित वर्णन करो ॥ ५९ ॥ श्रीशिवजी बोले हे महादेवि ! सब धर्मोंको जाननेवाली कालीदेवीका सम्पूर्ण कामनाओंका साधन करनेवाला अद्भुत कवच मैं तुमारेसे वर्णन करता हूं ॥ ६० ॥ इसके प्रभावसे विशेष करके शत्रुका नाश होता है तथा यह कवच मनुष्योंके आत्माकी रक्षा करता है. और सम्पूर्ण अरिष्टोंको नाश करता तथा व्यभिचारको नाश करता है ॥ ६१ ॥ सुख देनेवाला, भोग देनेवाला, उत्तम वशीकरणरूप यह कवच है, जिससे शत्रुगण नाश होते हैं और व्याधि (रोग) से पीडित होते हैं ॥ ६२ ॥ ज्वरसे दुःखी और अपने मनोरथसे रहित होते हैं सो

पृथिवीपर छोड देना, इस कालिकाकवचका भैरव ऋषि, गायत्री छन्द, कालिका देवता, शीघ्र शत्रुनाशनार्थ विनियोग करना, अनंतर श्रीकालीजीका ध्यान इस प्रकार करके कि तीन नेत्रोंवाली तथा बहुत विकटरूपवाली, चार भुजावाली, चंचल तथा तृष्णायुक्त जिह्वावाली तथा पूर्ण चन्द्रमाके समान मुखवाली ॥६४॥ नील कमलके समान श्यामवर्णवाली सम्पूर्ण शत्रुओंको नाश करनेवाली, चारों भुजाओंमेंसे एक हाथमें मनुष्यका मुण्ड, दूसरे हाथमें खड्ग, तीसरेमें कमल, चौथे हाथमें वरदको धारण करनेवाली ॥ ६५ ॥ रक्तवस्त्रोंको धारण करनेवाली तथा घोर दाढवाली, अट्टाट्टहास करनेवाली, सदैव दिशारूप वस्त्रोंकोभी धारनेवाली ॥ ६६ ॥ शव (मुर्दा) के आसनपर स्थित, मुण्डोंकी मालासे विभूषित इस प्रकार महाकालीदेवीका ध्यान करके फिर कवच पढे ॥ ६७ ॥

ॐ कालिका घोररूपाढ्या सर्वकामप्रदा शुभा ॥
सर्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु मे ६८ ॥

ह्रींह्रींस्वरूपिणी चैव ह्रींह्रींह्नंसंगिनी तथा ॥
ह्रांह्रींक्षैंक्षौंस्वरूपा सा सर्वदा शत्रुनाशिनी ॥६९॥
श्रींह्रींऐंरूपिणी देवी भवबन्धविमोचनी ॥
यथा शुंभो हतो दैत्यो निशुंभश्च महासुरः॥७०॥
वैरिनाशाय वन्दे तां कालिकां शंकरप्रियाम् ॥
ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च वाराही नरसिंहिका ॥७१॥
कौमारी श्रीश्च चामुण्डा खादयन्तु मम द्विपान् ॥
सुरेश्वरी घोररूपा चण्डमुण्डविनाशिनी ॥ ७२ ॥
मुण्डमालावृतांगी च सर्वतः पातु मां सदा ॥
ह्रींह्रींकालिके घोरदंष्ट्रे रुधिरप्रिये रुधिरपूर्णवक्त्रे च रुधिरावितस्तिनि मम शत्रून्खादय खादय हिंसय हिंसय मारय मारय भिंधि भिंधि छिंधि छिंधि उच्चाटय उच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय शोषय यातुधानीं चामुण्डे ह्रांह्रींवांवीं कालिकायै सर्वशत्रून् समर्पयामि स्वाहा ॐ जहि २ किटि २ किरि २ कटु २ मर्दय २ मोहय २

हर २ मम रिपून् ध्वंसय २ भक्षय २ त्रोटय ३ यातुधानिका चामुण्डा सर्वजनान् राजपुरुषान् राजश्रियं देहि देहि नूतनु नूतनु धान्यं जक्षय॥२॥ क्षांक्षींक्षूंक्षैंक्षौंक्षः स्वाहा ॥ इति कवचम् ॥

यह कवच समाप्त भया, अब फल लिखते हैं ॥

इत्येतत्कवचं दिव्यं कथितं तव सुन्दरि ॥
ये पठंति सदा भक्त्या तेषां नश्यंति शत्रवः ॥१॥
वैरिणः प्रलयं यांति व्याधिताश्च भवन्ति हि ॥
धनहीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्य सर्वदा ॥ २ ॥
सहस्रपठनात्सिद्धिः कवचस्य भवेत्तथा ॥
ततः कार्याणि सिद्ध्यन्ति तथा शंकरभाषितम्॥३
स्मशानांगारमादाय चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ॥
पादोदकेन पिष्ट्वा च लिखेल्लोहशलाकया ॥ ४ ॥
भूमौ शत्रून् हीनरूपान् उत्तराशिरसस्तथा ॥
हस्तं दत्त्वा तद्धृदये कवचं तु स्वयं पठेत् ॥ ५ ॥

ह्रींह्रींस्वरूपिणी चैव ह्रींह्रांह्रंसंगिनी तथा ॥
ह्रांह्रींक्षैंक्षौंस्वरूपा सा सर्वदा शत्रुनाशिनी ॥६९॥
श्रींह्रींऐंरूपिणी देवी भवबन्धविमोचनी ॥
यथा शुंभो हतो दैत्यो निशुंभश्च महासुरः॥७०॥
वैरिनाशाय वन्दे तां कालिकां शंकरप्रियाम् ॥
ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च वाराही नरसिंहिका ॥७१॥
कौमारी श्रीश्च चामुण्डा खादयन्तु मम द्विपान् ॥
सुरेश्वरी घोररूपा चण्डमुण्डविनाशिनी ॥ ७२ ॥
मुण्डमालावृतांगी च सर्वतः पातु मां सदा ॥
ह्रींह्रींकालिके घोरदंष्ट्रे रुधिरप्रिये रुधिरपूर्णवक्त्रे
च रुधिरावितस्तिनि मम शत्रून्खादय खादय
हिंसय हिंसय मारय मारय भिंधि भिंधि छिंधि
छिंधि उच्चाटय उच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय
शोषय यातुधानीं चामुण्डे ह्रांह्रींवांवीं कालि-
कायै सर्वशत्रून् समर्पयामि स्वाहा ॐ जहे २
किटि २ किरि २ कट्ट २ मर्दय २ मोहय २

ह्र २ मम रिपून् ध्वंसय २ भक्षय २ त्रोटय ३ यातुधानिका चामुण्डा सर्वजनान् राजपुरुषान् राजश्रियं देहि देहि नूतनु नूतनु धान्यं जक्षय॥२॥ क्षांक्षींक्षूंक्षैंक्षौंक्षः स्वाहा ॥ इति कवचम् ॥

यह कवच समाप्त भया, अब फल लिखते हैं ॥

इत्येतत्कवचं दिव्यं कथितं तव सुन्दरि ॥
ये पठंति सदा भक्त्या तेषां नश्यंति शत्रवः ॥१॥
वैरिणः प्रलयं यांति व्याधिताश्च भवन्ति हि ॥
धनहीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्य सर्वदा ॥ २ ॥
सहस्रपठनात्सिद्धिः कवचस्य भवेत्तथा ॥
ततः कार्याणि सिद्ध्यन्ति तथा शंकरभाषितम्॥३
स्मशानांगारमादाय चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ॥
पादोदकेन पिष्ट्वा च लिखेल्लोहशलाकया ॥ ४ ॥
भूमौ शत्रून् हीनरूपान् उत्तराशिरसस्तथा ॥
हस्तं दत्त्वा तद्धृदये कवचं तु स्वयं पठेत् ॥ ५ ॥

प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा वै तथा मंत्रेण मंत्रवित् ॥
हन्यादस्त्रप्रहारेण शत्रोश्च कण्ठमक्षयम् ॥ ६ ॥
ज्वलदंगारलेपेन भवति ज्वरितो भृशम् ॥
प्रोक्षणैर्वामपादेन दरिद्रो भवति ध्रुवम् ॥ ७ ॥
वैरिनाशकरं प्रोक्तं कवचं वश्यकारकम् ॥
परमैश्वर्य्यदं चैव पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ ८ ॥
प्रभातसमये चैव पूजाकाले प्रयत्नतः ॥
सायंकाले तथा पाठात् सर्वसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ९ ॥
शत्रुरुच्चाटनं याति देशाद्वै विच्युतो भवेत् ॥
पश्चात्किंकरतामेति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ १० ॥
शत्रुनाशकरं देवि सर्वसंपत्करं शुभम् ॥
सर्वदेवस्तुते देवि कालिके त्वां नमाम्यहम् ॥ ११ ॥
इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे पार्वतीश्वरसंवादे मारणप्रयोगो नाम प्रथमः पटलः ॥ १ ॥

अर्थ–श्रीशिवजी कहते हैं, हे सुन्दरि ! यह दिव्य

कवच हमने तुमसे कहा; जे सदैव भक्तिपूर्वक पढते हैं उनके शत्रु नाश हो जाते हैं ॥ १ ॥ तथा सब शत्रुगण रोगसे पीडित होकर नाश हो जावे तथा उन शत्रुओंके धन व पुत्रनाश होवे ॥ २ ॥ तथा इस कवचके सहस्र पाठसे सिद्धि होती है, सम्पूर्ण कार्य सिद्धि होते हैं यह शंकरजीने कहा है ॥ ३ ॥ चितामें जाकर श्मशानका कोयला लाकर उसको पीसे चरणोंके जलसे पीसकर लोहेकी कीलसे लिखे ॥ ४ ॥ फिर पृथिवीपर शत्रुकी मूर्ति बनाय लोहेकी कीलस्वरूपको काटकर उत्तरमुख सुलाय देवे फिर उसके हृदयपर अपना हाथ धरकर कवचको पढे ॥ ५ ॥ तथा मंत्रसे प्राणप्रतिष्ठा मंत्रद्वजन करे फिर शस्त्रप्रहारसे शत्रुका शिर काट डाले ॥ ६ ॥ जलते हुए अंगारके लेपसे शत्रु ज्वरपीडित हो जावे, वाम-पादके प्रोक्षणसे निश्चय दरिद्री होवे ॥ ७ ॥ यह वैरिनाश करनेवाला तथा वश करनेवाला कवच कहा, महान् ऐश्वर्य देनेवाला पुत्रपौत्रादि वृद्धि करनेवाला है ॥ ८ ॥

प्रातः समयमें पूजाकालमें तथा सायंकालसमय सावधान-तापूर्वक पढनेसे निश्चय संपूर्ण सिद्धि होती है ॥ ९ ॥ शत्रुका उच्चाट होता है देशसे निकल जाता है अथवा पीछेसे सेवक बन जाता है, सत्य है इसमें कुछ संशय नहीं ॥ १० ॥ हे देवि ! सब शत्रुओंके नाश करनेवाली सम्पूर्ण सम्पत्तिको करनेवाली, सम्पूर्ण देवताओं करके स्तुति करी जाती है ऐसी जो तुम कालिकादेवी हो ताहि मैं नमस्कार करता हूं ॥ ११ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे भाषायां पार्वतीश्वरसंवादे मारणप्रयोगो नाम प्रथमः पटलः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः पटलः ॥ २ ॥

॥ तत्रादौ अश्वमारणम् ॥

कृष्णजीरकचूर्णेन अंजिताश्वो न पश्यति ॥
तक्रेण क्षालयेच्चक्षुः सुस्थो भवति घोटकः ॥ १ ॥

घ्राणे च्छुच्छुन्दरीचूर्णं दत्ते पतति घोटकः ॥
सुस्थश्चन्दनपानेन नासायां तु न संशयः ॥ २ ॥
अश्वास्थिकीलमश्विन्यां कुर्यात्सप्तांगुलं पुनः ॥
निखनेदश्वशालायां मारयत्येव घोटकान् ॥ ३ ॥
ॐ पच पच स्वाहा ॥ इति मंत्रः ॥

अर्थ-अब दूसरा पटल लिखते हैं काले जीरेका चूर्ण कर उसके अंजनसे घोडेको दीख नहीं पडता है; अर्थात् घोडा अंधा हो जाता है, फिर मठासे नेत्र धोये जानेसे नेत्र अच्छे हो जाते हैं ॥ १ ॥ मरी हुई छुछुंदरिको सुखाय चूर्ण करके उसकी सुगंधि देनेसे घोडा तुरत गिर जाता है, फिर जलमें चन्दन घिसकर नासिकाद्वारा पान करानेसे निस्सन्देह अच्छा हो जाता है ॥ २ ॥ घोडेके हाडकी कीलको लेके अश्विनीनक्षत्रमें सात अंगुलकी घोडशालामें गाड देवे तो वहांके घोडोंको मारे है ॥ ३ ॥ ॐ पच पच स्वाहा ॥ यह मंत्र पढकर कील गाडे, प्रथम १०००० मंत्र जपकर सिद्ध कर लेवे ॥

॥ धीवरस्य मत्स्यनाशनम् ॥

संग्राह्यं पूर्वफाल्गुन्यां बदरीकाष्ठकीलकम् ॥
अष्टांगुलं च निखनेन्नाशयेद्धीवरे गृहे ॥ ४ ॥
मंत्रः ॥ ॐ ॥ जले पच पच स्वाहा ॥
इत्यनेन मंत्रेण ॥ अयुतजपात्सिद्धिः ॥

अर्थ–अब धीवरकी मछलियोंके नाश होनेका प्रकार वर्णन करते हैं पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें बेरीकी लकडीकी कीलको लाकर आठ अंगुल प्रमाण धीवरके घरमें गाड देनेसे उसकी मछलियोंका नाश हो जाता है ॥ ४ ॥ मंत्र यह है, । ॐ जले पच पच स्वाहा । इस मंत्रसे कीलको गाडे, प्रथम दस हजार जप कर सिद्धि कर लेवे ॥

॥ रजकस्य वस्त्रनाशनम् ॥

ग्राहयेत्पूर्वफाल्गुन्यां जातीकाष्ठस्य कीलकम् ॥
अष्टांगुलप्रमाणं तु निखन्याद्रजके गृहे ॥ ५ ॥
शताभिमंत्रितं तेन तस्य वस्त्राणि नाशयेत् ॥
ॐ कुंभं स्वाहा ॥

अर्थ-पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रमें आठ अंगुलप्रमाण चमेलीके काठकी कीलको लेकर धोबीके घरमें गाड देवे॥५॥सौ वार मंत्रसे अभिमंत्रित करके गाडे तो उसके वस्त्रोंका नाश हो जावे ॥ ॐ कुम्भं स्वाहा ॥ इस मंत्रसे अभिमंत्रित करे ॥

॥ तैलनाशनम् ॥

मधुकाष्ठस्य कीलं तु चित्रायां चतुरंगुलम् ॥
निखनेत्तैलशालायां तैलं तत्र विनश्यति ॥ ६ ॥
ॐ दह दह स्वाहा, इत्यनेन मंत्रेण
सहस्रसंख्याकजपः ॥

अर्थ-मौरेठकी लकडीकी कील चार अंगुलप्रमाण चित्रानक्षत्रमें लेकर तेलकी शालामें गाड देवे तो तेलका नाश हो जाता है ॥ ६ ॥ ॐ दह दह स्वाहा ॥ इस मंत्रका एक हजार जप करनेसे प्रथम मंत्रको सिद्धि कर लेवे ॥

॥ शाकनाशनम् ॥

गन्धकं चूर्णितं तत्र निक्षिपेज्जलमिश्रितम् ॥
नश्यन्ति सर्वशाकानि शेषाण्यल्पफलानि च ॥७॥

अर्थ–जल मिलाय गन्धकके चूर्णको खेतमें छिड़कनेसे सम्पूर्ण शाक नाक हो जाता है अर्थात् सब शाक सूख जाता है ॥ ७ ॥

॥ दुग्धनाशनम् ॥

निक्षिपेदनुराधायां जम्बुकाष्ठस्य कीलकम् ॥
अष्टांगुलं गोपगेहे गोदुग्धं परिनश्यति ॥ ८ ॥

अर्थ–अनुराधानक्षत्रमें जामुनकी लकडीकी आठ अंगुलकी कीलको लाकर अहीरके घरमें गाड़ देनेसे उसकी गौवोंके दूधका नाश हो जाता है ॥८ ॥

॥ ताम्बूलनाशनम् ॥

नवांगुलं पूगकाष्टकीलकं निक्षिपेद्गृहे ॥
तांबूलिकस्य क्षेत्रे वा ऋक्षे शतभिषाऽह्वये ॥ ९ ॥
तदा तस्य च ताम्बूलं नाशयत्याशु निश्चितम् १०

अर्थ–नौ अंगुलप्रमाण सुपारीके काठकी कील शतभिषानक्षत्रमें तंबोलीके घरमें अथवा उसके खेतमें

डाल देनेसे ॥ ९ ॥ जिसके ताम्बूलों (पानों) का निश्चय नाश हो जाता है ॥ १० ॥

॥ मद्यनाशनम् ॥

षोडशांगुलकं कीलं कृत्तिकायां सितार्कजम् ॥
शौण्डिकस्य गृहे क्षिप्तं मदिरां नाशयत्यलम् ११॥

अर्थ–कृत्तिकानक्षत्रमें सफेद आंक वृक्षके काष्ठकी सोलह अंगुल प्रमाण कील लाकर कलारके घरमें डालनेसे उसकी मदिराका नाश होता है ॥ ११ ॥

॥ अथ सस्यनाशनम् ॥

अथ सस्यविनाशं च कथयामि समासतः ॥
येनैव कृतमात्रेण सस्यनाशो भविष्यति ॥ १२ ॥
इन्द्रवज्रं यत्र पतेत् गृहीत्वा तत्र मृत्तिका ॥
तन्मृत्तिकां समादाय वज्रं कृत्वा विचक्षणः ॥१३॥
क्षेत्रे यस्यारोपयेत्तत् तस्मिन् सस्यं विनश्यति ॥
इमं मंत्रं समुच्चार्य वज्रं क्षेत्रे च रोपणात् ॥ १४ ॥
अष्टोत्तरशतेनैव मंत्रेणानेन मंत्रयेत् ॥ मंत्रस्तु ॥

ॐ नमो वज्रपाताय सुरपतिराज्ञापयति हुं फट् स्वाहा ॥

इति श्रीमदुड्डीशतंत्रे रावणकृते द्वितीयः पटलः॥२॥

अर्थ—अब सस्यनाशन प्रकार कहते हैं जिसके करनेसे सस्यका नाश अवश्य होवेगा ॥ १२ ॥ इन्द्रवज्र (बिजली) जहांपर गिरे, वहांकी मिट्टी लेकर वज्र बनाय लेवे ॥ १३ ॥ फिर उस वज्रको लेकर जिस खेतमें खडा कर देवे, उस खेतका धान्यनाश हो जावे, आगे लिखे हुए मंत्रसे वज्रको खडा करे ॥ १४ ॥ मंत्रसे उस वज्रको १०८ वार अभिमंत्रित कर लेवे ॥ ॐ नमो वज्रपाताय सुरपतिराज्ञापयति हुं फट् स्वाहा ॥ यह मंत्र है ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे उमामहेश्वरसंवादे भाषायां द्वितीयः पटलः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

तत्र मोहनम् ॥ ईश्वर उवाच ॥

अथातस्सम्प्रवक्ष्यामि प्रयोगं मोहनाभिधम् ॥
सद्यः सिद्धिकरं नृणां पार्वति शृणु यत्नतः ॥ १ ॥
सहदेव्या रसेनैव तुलसीबीजचूर्णकम् ॥
रवौ यस्तिलकं कुर्यान्मोहयेत्सकलं जगत् ॥ २ ॥

अर्थ--अब तीसरे पटलमें मोहनप्रयोग लिखते हैं श्रीशिवजी बोले अब आगे मोहन नाम प्रयोग वर्णन करूंगा जो मनुष्योंको शीघ्र सिद्धि करे है. हे पार्वति! सावधान होकर श्रवण करो ॥ १ ॥ सहदेवीके रसमें तुलसीके बीजका चूर्ण मिलाय रविवारके दिन जो तिलक करे तो सब जगत्‌को मोहे ॥ २ ॥

सिंदूरं कुंकुमं चैव गोरोचनसमन्वितम् ॥
धात्रीरसेन संपिष्टं तिलकं लोकमोहनम् ॥ ३ ॥
मनश्शिला च कर्पूरं पेषयेत्कदलीरसैः ॥
तिलकं मोहनं नृणां नान्यथा मम भाषितम् ॥ ४॥

अर्थ–सेंदुर, केशर, गोरोचन, वह सब लेकर आंवलोंके रसमें पीसकर तिलक करे तो लोक मोहित होवे॥३॥ मैनशिल, कपूरको केलेके रसमें पीसकर तिलक करे तो मनुष्योंको मोहित करे, श्रीशिवजी कहते हैं कि यह हमारा कहा गया सत्य है ॥ ४ ॥

हरितालं चाश्वगन्धां पेपयेत्कदलीरसैः ॥
गोरोचनेन संयुक्तं तिलकं लोकमोहनम् ॥ ५ ॥
शृंगीचन्दनसंयुक्तं वचाकुष्ठसमन्वितम् ॥
धूपं देहे तथा वस्त्रे मुखे चैव विशेषतः ॥ ६ ॥
राजाप्रजापशूपक्षिदर्शनान्मोहकारकम् ॥
गृहीत्वा मूलतांबूलं तिलकं लोकमोहनम् ॥ ७ ॥

अर्थ–हरताल, असगन्ध, गोरोचन इन सबको लेके केलेके रसमें पीसकर तिलक करे तो सब लोक मोहित होवे ॥ ५ ॥ काकरासिंगी, चंदन, वच, कूठ यह सब संयुक्त कर इनकी धूप अपनी देह तथा वस्त्र व मुखपर देवे ॥ ६ ॥ तो देखनेमे राजा, प्रजा, पशु, पक्षी, मोहित

हो जावे तथा ताम्बूल (पान) की जड़को पीसकर तिलक करे, तो सब लोक मोहित होवे ॥ ७ ॥

सिंदूरं च वचां श्वेतां ताम्बूलरसपेषयेत् ॥
अनेनैव तु मंत्रेण तिलकं लोकमोहनम् ॥ ८ ॥
भृंगराजमपामार्गं लाजा च सहदेविका ॥
एभिस्तु तिलकं कृत्वा त्रैलोक्यं मोहयेन्नरः ॥ ९ ॥
श्वेतदूर्वां गृहीत्वा तु हरितालं च पेषयेत् ॥
एभिस्तु तिलकं कृत्वा त्रैलोक्यं मोहयेन्नरः॥१०॥
मंत्रस्तु ॥ ॐ उड्डामरेश्वराय सर्वजगन्मोहनाय
अंआंइंईंउंऊंऋंॠंहुं फट् स्वाहा ॥
अयुतजपात्सिद्धिः ॥ सप्तवाराभिमंत्रितं कुर्य्यात्॥
इति श्रीमदुड्डीशतंत्रे तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

अर्थ-सेंदुर, वच सपेद, इनको पानके रसमें पीसे, अनन्तर इसका तिलक मंत्रसे अभिमंत्रित करके करे तो सब लोक मोहित होवे ॥ ८ ॥ भंगरा, चिर्मिटा, लाजावन्ती, सहदेई इनका तिलक करे तो देखनेसे मनुष्य मोहित

होवे ॥ ९ ॥ सपेद दूबको लेकर हरतालमें घोटकर इसका तिलक करे तो लोकमें मनुष्य मोहित होवे ॥ १० ॥ ॐ उड्डामरेश्वराय सर्वजगन्मोहनाय अंआंइंईंउंऊंकंकंहुं फट् स्वाहा । यह मंत्र है, दश हजार मंत्र जपनेसे सिद्धि होवे, तिलक करते समय मंत्रसे सात वार अभिमंत्रित करे ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे
भाषाटीकायां तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः पटलः ॥ ४ ॥

तत्र स्तंभनम्॥अथ जलस्तंभनम्॥ईश्वर उवाच ॥
अथाग्रे संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं स्तंभनाभिधम् ॥
यस्य साधनमात्रेण सिद्धिः करतले भवेत् ॥ १ ॥
तत्रादौ कथयिष्यामि जलस्तंभनमुत्तमम् ॥
कुलीरनेत्रदंष्ट्राणि रुधिरं मांसमेव च ॥ २ ॥
हृदयं कच्छपस्यैव शिशुमारवसा तथा ॥
बिभीतकस्य तैलेन सर्वाण्येकत्र सिद्धयेत् ॥ ३ ॥

एभिः प्रलेपनं कुर्याज्जले तिष्ठेद्यथासुखम् ॥
उरगस्य वसा ग्राह्या नक्रस्य नकुलस्य च ॥ ४ ॥
डुंडुभस्य शिरो ग्राह्यं सर्वाण्येकत्र कारयेत् ॥
विभीतकस्य तैलेन सिद्धं कुर्याद्यथाविधि ॥ ५ ॥
तैलं पक्त्वाऽयसे पात्रे कृष्णाष्टम्यां समाहितः ॥
शंकरस्यार्चनं कृत्वा मूर्ध्नि कृत्वा प्रदक्षिणाम् ॥६॥
अष्टाऽधिकसहस्रेण चाज्यहोमं प्रजायते ॥
लेपं कृत्वाऽस्य मंत्रेण ततः सिद्धिः प्रजायते ॥७॥
मंत्रस्तु ॥ ॐ नमो भगवते जलं स्तंभय हुं फट् स्वाहा ॥

अर्थ–अब चौथे पटलमें स्तंभन प्रकार कहते हैं तहां प्रथम जलस्तंभनप्रकार वर्णन करते हैं श्रीशिवजी बोले अब आगे जलस्तंभन कहूंगा जिस स्तंभनप्रयोगके साधन मात्रसे सिद्धि हाथमें आ जाती है ॥ १ ॥ तहां प्रथम उत्तम जलस्तंभन कहूंगा. केकडाकी आंखें, दाढें, रुधिर, मांस ॥ २ ॥ कछुवेका हृदय, शिशुमारकी वसा तथा

मिलावेको लेके इन सबको एकत्र कर तेलमें सिद्ध करे, ॥ ३ ॥ इसका लेप करके जलमें जावे तो जलमें स्थिति हो जावे है यथासुखपूर्वक स्थित हो जावे तथा सांपकी चर्वी लेके व न्यौला व नाकेकीभी वसाको लेवे ॥ ४ ॥ निर्विष सांपके बच्चेका शिर लेके इन सबको एकत्र करे मिलावेके तेलमें यथाविधिपूर्वक सिद्धि करे ॥ ५ ॥ तेल पक जानेपर लोहेके पात्रमें कृष्णपक्षकी अष्टमीमें अच्छे प्रकार रक्खे, शंकरजीका पूजन करके शिरसा प्रणाम करे ॥ ६ ॥ एक हजार आठ वार मंत्रसे हवन घीसे करे इसका लेप मंत्रसे करे तो तैल सिद्ध हो जाता है ॥ ७ ॥ ॐ नमो भगवते जलं स्तंभय हुं फट् स्वाहा ॥ यह मंत्र है॥

॥ अथ अग्निस्तंभनम् ॥

मंडूकस्य वसा ग्राह्या कर्पूरेणैव संयुता ॥
लेपमात्राच्छरीराणामग्निस्तंभः प्रजायते ॥ ८ ॥
कुमारीरसलेपेन किंचिद्वस्तु न दह्यते ॥
अग्निस्तंभनयोगोयं नान्यथा मम भाषितम् ॥ ९ ॥

अर्थ-मेंडककी चर्बीको लेके कपूर मिलाय शरीरपर लेप करनेसे अग्निसे अंग नहीं जले ॥ ८ ॥ घीग्वारके रससे लेपन करनेसे कोईभी वस्तु हो दग्ध नहीं होती है यह अग्निस्तम्भनयोग हमारा कहा भया सत्य है ॥ ९ ॥

॥ अथ बुद्धिस्तम्भनम् ॥

उलूकस्य कपेर्वापि तांबूले यस्य दापयेत् ॥
विष्ठां प्रयत्नतस्तस्य बुद्धिस्तंभः प्रजायते ॥ १० ॥

अर्थ-उल्लूपक्षी और वानरकी विष्ठाको लेकर पानमें रखकर जिसको यत्नसे खिलावे उसकी बुद्धि स्तंभन हो जाती है अर्थात् वह मनुष्य जडबुद्धि हो जाता है॥ १० ॥

॥ अथ शस्त्रस्तंभनम् ॥

पुष्यार्केह्नि समादाय अपामार्गस्य मूलकम् ॥
घृष्ट्वा लिंपेच्छरीरे स्वे शस्त्रस्तंभः प्रजायते ॥ ११ ॥

अर्थ-रविवार पुष्यनक्षत्रके दिन ओंगाकी जडको लेके और घिसके अंगमें लेपे तो शरीरपर कोई हथियार नहीं गडे ॥ ११ ॥

॥ अथ मेघस्तंभनम् ॥

इष्टकाद्वयमादाय संपुटं करयेन्नरः ॥
स्मशानांगारसंलेख्य भूस्थं स्तंभनमेघकम् ॥१२॥

अर्थ–दो ईटोंको लेकर स्मशानके कोयलेमे मेघ लिखकर संपुट बनाय पृथिवीमें गाड देवे तो मेघोंका स्तम्भन होवे, गाडते समय ॐ मेघानां स्तंभनं कुरु २ स्वाहा, यह मंत्र पढे ॥ १२ ॥

॥ अथ निद्रास्तम्भनम् ॥

मधुना बृहतीमूलैरंजयेल्लोचनद्वयम् ॥
निद्रास्तम्भो भवेत्तस्य नान्यथा मम भाषितम्१३
इति श्रीरावणकृते उड्डीशतंत्रे चतुर्थः पटलः॥४॥

अर्थ–कटेलीकी जडको सहतमें घिसकर दोनों नेत्रोंमें अंजन करे तो उसकी नींद थम जावे, श्रीशिवजी कहते हैं यह हमारा कहा भया असत्य नहीं है ॥ १३ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे पार्वतीश्वरसंवादे भाषायां स्तंभनप्रयोगो नाम चतुर्थः पटलः ॥४॥

अथ पंचमः पटलः ॥ ५ ॥

तत्र विद्वेषणम् ॥ ईश्वर उवाच ॥

अथाग्रे कथयिष्यामि योगं विद्वेषणाभिधम् ॥
महाकौतुकरूपं च पार्वति शृणु यत्नतः ॥ १ ॥

अर्थ—अब पांचवें पटलमें विद्वेषण प्रयोग लिखते हैं श्रीशिवजी कहते हैं कि अब आगे विद्वेषण नाम प्रयोग वर्णन करूंगा जिस महाकौतुकरूप विद्वेषणयोगसे आपसमें वैरभाव हो जाता है, सो हे पार्वति ! सावधान होकर श्रवण करो ॥ १ ॥

गृहीत्वा गजकेशं च तथा व्याघ्रकचं पुनः ॥
मृत्तिकां पादयोऽरीणां पोटलीं निखनेद्भुवि ॥ २ ॥
तस्योपरि स्थापयेऽग्निं मालतीपुष्प होमयेत् ॥
विद्वेषं कुरुते यस्य भवेत्तस्य हि नान्यथा ॥ ३ ॥
मंत्रस्तु ॥ ॐ नमो आदित्याय गजसिंहवदमुकस्य अमुकेन सह विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा ॥

अर्थ—हाथीके केश तथा व्याघ्रके केश लेकर फिर शत्रुओंके दोनों चरणतलोंके नीचेकी मृत्तिका लेके पोटलीमें रख पृथिवीमें गाड देवे ॥ २ ॥ फिर उसके ऊपर अग्नि स्थापन करके चमेलीके फूल व घी मिलाय मंत्रपूर्वक हवन करे तो जिनके नामसे हवन किया जाय उन दोनोंमें परस्पर वैरभाव हो जावे ॥ ३ ॥ मंत्र मूलमें लिखा है, अमुकको जगह दोनोंका नाम उच्चारण करे कि जिन दोनोंका विद्वेषण कराना है ॥

ब्रह्मदंडी समूला च काकजंघासमन्विता ॥
जातीपुष्परसैर्भाव्या सप्तरात्रं पुनः पुनः ॥ ४ ॥
ततो मार्जारमूत्रेण सप्ताहं भावयेत्पुनः ॥
एष धूपः प्रदातव्यो शत्रुगोत्रस्य मध्यतः ॥ ५ ॥
यथा गन्धं समाघ्राति तथा सर्वैस्समं कलिः ॥
महद्विद्वेषणं याति सुहृद्भिर्बान्धवैस्सह ॥
सुस्थी च करणं प्रोक्तं घृतं गुग्गुलधूपतः ॥

अर्थ—ब्रह्मदंडी जडसहित, काकजंघा मिलाय चमे-

लीके रससे भावना देवे इस प्रकार सात रात्रितक सात भावना देवे ॥ ४ ॥ अनन्तर बिल्लीके मूत्रकी सात दिन भावना देवे फिर इसकी धूप शत्रुगोत्रके बीचमें देवे अर्थात् जिनसे विद्वेषण कराना चाहे, उनके मध्य धूनी देवे ॥५॥ तो यथाधूपानुसार उसकी गंध सूंघनेसे शत्रुओंके बीच कलह होवे मित्र व बांधवों सहित बडा वैरभाव हो जावे ॥ ६ ॥ और फिर जब वैरभाव दूर कराना चाहे तो घी और गुग्गुलकी धूप देवे ॥

एकहस्ते काकपक्ष उल्लूकस्य परे करे ॥ ७ ॥
मंत्रयित्वा मिलत्यग्रे कृष्णसूत्रेण वेष्टयेत् ॥
यद्गृहे निखनेद्भूमौ विद्वेषं तस्य जायते ॥ ८ ॥

अर्थ-एक हाथमें काकपक्षीका पंख, दूसरे हाथमें उल्लूपक्षीका पंख लेके मंत्रसे अभिमंत्रित कर मिलाय देवे फिर काले सूतसे लपेटे, फिर जिसके घरमें गाडदेवे, उसको विद्वेष होवे अर्थात् उसके घरमें वैरभाव होनेलगे॥७॥८॥

गजकेसरिणो दंतान्नवनीतेन पेषयेत् ॥
यन्नाम्ना हूयते चाग्नौ तयोर्विद्वेषणं भवेत् ॥ ९ ॥
अश्वकेशं गृहीत्वा च माहिषं केशसंयुतम् ॥
सभायां दीयते धूपो विद्वेषो जायते क्षणात् ॥१०॥

अर्थ–हाथी और व्याघ्रके दांतोंका चूर्ण गौके मक्खनमें मिलाय जिसके नामसे मंत्र पढकर अग्निमें हवन करे तो उन दोनोंका परस्पर वैरभाव हो जावे ॥ ९ ॥ तथा घोडेके और भैंसाके केश मिलाय सभामें धूप देवे तो विद्वेषण हो जावे ॥ १० ॥

मूषमार्जारयोश्चैव विष्टामादाय यत्नतः ॥
विद्वेष्यपादतलतो मृदमादाय मिश्रयेत् ॥ ११ ॥
जपेन्मन्त्रशतं कुर्यान्नरपुत्तलिकां शुभाम् ॥
नीलवस्त्रेण संवेष्ट्य तद्गृहे निखनेद्यदि ॥ १२ ॥
विद्वेषं जायते शीघ्रं पितापुत्रावपि ध्रुवम् ॥
मंत्रस्तु ॐ नमो नारायणाय अमुकस्य अमुकेन

सह विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा ॥ १३ ॥
इति श्रीरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे पार्वतीश्वरसंवादे विद्वेषणप्रयोगवर्णनो नाम पंचमः पटलः ॥ ५ ॥

अर्थ–मूसे और बिल्लीकी विष्ठाको यत्नसे लेकर और जिन दोनोंका द्वेष कराना हो, उनके चरणके नीचेकी मिट्टी लेकर मिलाय देवे ॥ ११ ॥ फिर एक सौ बार मंत्र जप कर मनुष्याकार पूतली बना लेवे और नीले कपडेसे लपेटकर घरमें गाडना ॥ १२ ॥ तो पिता पुत्रमेंभी निश्चय शीघ्रही वैरभाव हो जावे, मंत्र जो मूलमें लिखा है सो विचारपूर्वक उच्चारण करना ॥ १३ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे भाषायां विद्वेषणप्रयोगकथनो नाम पंचमः पटलः ॥ ५ ॥

हाथसे उठाय लेवे ॥ २ ॥ वह धूलि जिसके घरमें फेंक देवे इसका उच्चाटन होवे इस प्रकार सात दिन धूलि फेंकनेसे उस घरके स्वामीका अवश्य उस घरसे चित्त उच्चाटन हो जावे ॥ ३ ॥ मंत्र मूलमें है जिसका दश हजार जप करनेसे सिद्धि होवे ॥

गृहीत्वौदुम्बरं कीलं मंत्रेण चतुरंगुलम् ॥
निखनेद्यस्य शयने तस्योच्चाटनकं भवेत् ॥ ४ ॥
काकोलूकस्य पक्षाणि यद्गृहे निखनेद्द्रवौ ॥
यन्नाम्ना मंत्रयोगेन समस्तोच्चाटनं भवेत् ॥ ५ ॥
नरास्थिकीलकं भौमे निखनेच्चतुरंगुलम् ॥
तत्र मूत्रं तु यः कुर्यात् तस्योच्चाटनकं ध्रुवम् ॥६॥
मंत्रस्तु ॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय करालदंष्ट्राय अमुकं सपुत्रबांधवैस्सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रमुच्चाटय शीघ्रमुच्चाटय हुं फट् स्वाहा ठः ठः ॥ अयुतजपात्सिद्धिः ॥

अर्थ—गूलरवृक्षके काष्ठकी चार अंगुल प्रमाण कील

जिसके शयन करनेके स्थानमें पलंगपर गाड देवे उसका उच्चाटन हो जावे ॥ ४ ॥ तथा काकपक्षी और उल्लूपक्षीके पंख रविवारके दिन लाकर जिसके घरमें गाड देवे जिसके नामसे अभिमंत्रित करके गाडे उन सबका उच्चाटन होवे ॥ ५ ॥ तथा मनुष्यके हाडकी चार अंगुल प्रमाणकी मंगलवारके दिन लाकर जिसके द्वारपर गाड देवे, वहां पर जो मूत्र करे उसका उच्चाटन होवे निश्चय जानना॥६॥ मंत्र मूलमें लिखा है ॥ इस मंत्रका जप दश हजार करके प्रथम सिद्ध कर लेवे ॥

सिद्धार्थे शिवनिर्माल्यं यद्गृहे निखनेन्नरः ॥
उच्चाटनं भवेत्तस्य उद्धृते च पुनः सुखी ॥ ७ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे
पार्वतीश्वरसंवादे उच्चाटनप्रयोगवर्णनो नाम
षष्ठः पटलः ॥ ६ ॥

अर्थ–सरसों और शिवजीका निर्माल्य मिलाकर मनुष्य जिसके घरपर डाल देवे उसका उच्चाटन होवे,

अथवा एक पोटलीमें करके गाड देवे, उखाड लेनेसे फिर वह सुखी होवे ॥ ७ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे पार्वतीश्वरसंवादे भाषायां उच्चाटनप्रयोगो नाम षष्ठः पटलः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः पटलः ॥ ७ ॥

तत्र वशीकरणम् ॥ ईश्वर उवाच ॥

वशीकरणसर्वेषां पार्वति शृणु यत्नतः ॥
राजप्रजापशूनां च नान्यथा मम भाषितम् ॥ १ ॥

अर्थ-अब सातवें पटलमें वशीकरणप्रयोग लिखते हैं, श्रीशिवजी कहते हैं कि हे पार्वति ! सावधानपूर्वक श्रवण करो राजा, प्रजा तथा पशु आदि सबका वशीकरण वर्णन करताहूं यह हमारा कहा अन्यथा नहीं जानना ॥ १ ॥

चन्दनं तगरं कुष्ठं प्रियंगुं नागकेशरम् ॥
कुष्ठं धत्तूरपंचांगं समभागं तु कारयेत् ॥ २ ॥
छायायां वटिका कार्या प्रदेया खानपानयोः ॥

देखे सो वशी होवे ॥ ८ ॥ राजद्वार, तथा न्याययुद्धमें अर्थात् कचहरी, मुंसिफी आदि सब स्थानोंमें उसकी जय होवे ॥

॥ स्त्रीवशीकरणम् ॥

अथातस्सम्प्रवक्ष्यामि योगानां सारमुत्तमम् ॥
येन विज्ञानमात्रेण नारी भवति किंकरी ॥ ९ ॥
उशीरं चंदनं चैव मधुना सह संयुतम् ॥
गलहस्तप्रयोगोयं सर्वनारीप्रसाधकः ॥ १० ॥
चिताभस्म वचा कुष्ठं कुंकुमं रोचनं समम् ॥
चूर्णं स्त्रीशिरसि क्षिप्तं वशीकरणमद्भुतम् ॥ ११ ॥

अर्थ–अब आगे योगोंमें उत्तम सार कहूंगा, जिसके जानने मात्रसे स्त्री किंकरी (दासी) समान हो जाती है ॥ ॥ ९ ॥ खस, चन्दन इनमें शहत, मिलाय तिलक लगावे, और स्त्रीके साथ गलबांह योगसे स्त्रीको वश करे ॥ १० ॥ चिताकी भस्म, वच, कूठ, केशर, गोरोचन इनको समान

भाग ले चूर्ण करके जिस स्त्रीके शिरपर छोडे सो वशमें होवे यह अद्भुत वशीकरण है ॥ ११ ॥

॥ पतिवशीकरणम् ॥

रोचनं मत्स्यपित्तं च मयूरस्य शिखा तथा ॥
मधु सर्पिःसमायुक्तं स्त्रीवरांगविलेपनम् ॥ १२ ॥
निभृते मैथुने भावे पतिर्दासो भविष्यति ॥
रूपयौवनसम्पन्ना नाऽन्यास्विच्छा कदाचन॥१३॥
कुलत्थं विल्वपत्रं च रोचना च मनःशिला ॥
एतानि समभागानि स्थापयेत्ताम्रभाजने ॥ १४ ॥
सप्तरात्रस्थिते पात्रे तैलमेवं पचेद्बुधः ॥
तैलेन भगमालिप्य भर्तारमनुगच्छति ॥ १५ ॥
संप्राप्ते मैथुने भर्ता दासो भवति नान्यथा ॥

अर्थ—गोरोचन, मछलीका पित्त, तथा मोरशिखा, सहत,घी इनको मिलाय स्त्री अपनी भगपर लेप करे॥१२॥ फिर मैथुन करे, तो पति दासभावको प्राप्त होवे, रूप यौवन सम्पन्न स्त्रीको छोड अन्यकी कदापि इच्छा नहीं करे,

॥ १३ ॥ कुलथी, बेलपत्र, गोरोचन, मनशिल इनको समान भाग लेकर तांबेके पात्रमें ॥ १४ ॥ सात रात्रि पर्यन्त रखने उपरान्त तेलमें पचाय वह तेल भगपर लेपन करके अपने पतिके पास जावे ॥ १५ ॥ तो भर्ताके साथ मैथुन करनेसे उसका पति दास हो जाता है, यह कथन अन्यथा नहीं है ॥

कुंकुमं शतपुष्पं च प्रियंगुं वंशरोचना ॥
अश्वमूत्रेण लेपं च पुरुषाणां वशंकरम् ॥ १६ ॥
निंबकाष्ठस्य धूपेन धूपयित्वा भगं पुनः ॥
या नारी रमयेत्कांतं सा च तं दासतां नयेत्॥१७॥
कपित्थरसमादाय त्रिफला च ततः समा ॥
नारी वरांगलिप्तेन स्वपतिं दासतां नयेत् ॥ १८ ॥
इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे
सप्तमः पटलः ॥ ७॥

अर्थ—केशर, सौंफ, कांगनी, वंशलोचन इनको लेकर घोडाके मूत्रसे लेप बनाय भगपर करके पतिसंभोगसे

पतिको वश करे ॥ १६ ॥ नींबकी लकडीकी धूपसे भग- को धूपित करके जो स्त्री अपने पतिसे रमण करे वह उस- को दासभावमें लावे ॥ १७ ॥ कैथका रस लेकर त्रिफला समान भाग मिलाकर जो स्त्री अपनी भगपर लेप करे सो अपने पतिको दास बना लेवे ॥ १८ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उमामहेश्वरसंवादे भाषायां वशीकरणप्रयोगो नाम सप्तमः पटलः ॥ ७ ॥

अथाष्टमः पटलः ॥ ८ ॥

तत्राकर्षणम् ॥ ईश्वर उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि आकर्षणविधिं वरम् ॥
यस्य विज्ञानमात्रेण सत्यमाकर्षणं भवेत् ॥ १ ॥
मानुषासुरदेवाश्च सयक्षोरगराक्षसाः ॥
स्थावरा जंगमाश्चैव आकृष्टास्ते वराङ्गने ॥ २ ॥
सूर्यावर्तस्य मूलं तु पंचम्यां ग्राहयेद्बुधः ॥
ताम्बूलेन समं दद्यात्स्वयमायाति भक्षणात् ॥३॥

अर्थ-अब आठवें पटलमें आकर्षणप्रयोग लिखते हैं श्रीशिवजी बोले कि अब हम आकर्षण प्रयोग वर्णन करते हैं जिसके जानने मात्रसे सत्य आकर्षण होता है ॥ १ ॥ मनुष्य, असुर, देवता, यक्ष, नाग, राक्षस और स्थावर, जंगम जीव इन सबका आकर्षण होता है हे पार्वति! ॥२॥ सूर्यावर्त (हुलहुल) वृक्षकी जडको पंचमी तिथिमें लावे और पानके साथ जिस स्त्रीको भक्षण करा दी जावे तो वह उसके खानेसे अपनेही आप खींचकर वहां आ जाती है, अर्थात् स्वयं वह आ जावे ॥ ३ ॥

गृहीत्वार्जुनवन्दाकमाश्लेषायां प्रयत्नतः ॥
अजामूत्रेण सम्पिष्ट्वा निक्षिपेद्यस्य मस्तके ॥ ४ ॥
नारी वा पुरुषो वापि सुतो वा पशुरेव च ॥
आकृष्टः स्वयमायाति सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥५॥

अर्थ-अर्जुनवृक्षकी जड आश्लेषानक्षत्रमें लाकर बकरीके मूत्रमें अच्छे प्रकार पीसकर जिसके मस्तकपर छोड दिया जावे ॥ ४ ॥ तो स्त्री हो वा पुरुष अथवा पुत्र तथा

पशु सो स्वयं आकर्षण होकर आ जावे, यह हमने सत्य सत्य वर्णन किया है ॥ ५ ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते पार्वतीश्वरसंवादे उड्डीशतंत्रे भाषायां आकर्षणप्रयोगो नामाष्टमः पटलः ॥ ८ ॥

अथ नवमः पटलः ॥ ९ ॥

तत्र यक्षिणीसाधनम् ॥ ईश्वर उवाच ॥

अथ ते कथयिष्यामि यक्षिणीसाधनं वरम् ॥
यस्य सिद्धौ नराणां च सर्वे संति मनोरथाः ॥ १ ॥

अर्थ—अब नवम पटलमें यक्षिणियोंका साधन वर्णन करते हैं श्रीशिवजी बोले हे पार्वति ! अब तुमारेसे मैं यक्षिणियोंका साधन कहूंगा, जिनकी सिद्धिसे मनुष्योंके सब मनोरथ पूर्ण होते हैं ॥ १ ॥

॥ अथ यक्षिण्यः कथ्यंते ॥

१ सुंदरी २ मनोहरी ३ कनकवती ४ कामेश्वरी ५ रतिकरी ६ पद्मिनी ७ नटी ८ अनुरागिणी ॥

ॐ ह्रीं आगच्छ सुरसुंदरि स्वाहा ॥ ॐ आगच्छ मनोहरि स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं कनकवति मैथुनप्रिये स्वाहा ॥ ॐ आगच्छ कामेश्वरि स्वाहा ॥ ॐ आगच्छ रतिकरि स्वाहा ॥ ॐ आगच्छ पद्मिनि स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं आगच्छ नटि स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं आगच्छ अनुरागिणि स्वाहा ॥ इति यक्षिणीसाधनमंत्राः ॥ अथ सुरसुंदरीसाधनम् ॥ पवित्रगृहं गत्वा पूजनं कृत्वा गुग्गुलधूपं दत्त्वा त्रिसन्ध्यं पूजयेत् । सहस्रं नित्यं जपेत् । मासाभ्यन्तरे आगतायै चन्दनोदकेनार्घो देयः । माताभगिनीभार्याकृत्यं करोति । यदा माता भवति सिद्धद्रव्याणि ददाति । यदि भगिनी भवति तदा ह्यपूर्ववस्त्रं ददाति । यदि भार्या भवति तर्हि सर्वैश्वर्य्यं सर्वेषां परिपूरयेत् ॥ वर्जयेदन्यस्त्रीसह शयनम् । अन्यथा विनश्यति ॥

अर्थ—अब यक्षिणियोंको कहते हैं—१सुन्दरी, २मनो-

हरी, ३ कनकवती, ४ कामेश्वरी, ५ रतिकरी, ६ पद्मिनी, ७ नटी, ८ अनुरागिणी सम्पूर्ण सिद्धियोंकी देनेवाली यह आठ योगिनियां हैं, इन सबके मंत्र मूलमें लिखे हैं, तहां प्रथम सुरसुंदरीसाधन लिखते हैं—पवित्र घरमें जाकर पूजन करके गूगलकी धूप देवे तीनों संध्याओंमें सुरसुंदरीका पूजन करे और एक हजार मंत्र नित्य जपे तो एक महीनेके अन्तरमें सुरसुन्दरी देवी आवेगी तो चन्दनजलसे अर्घ देवे माता, बहिन, स्त्रीका कृत्य करे, जो माता होवे तो सिद्ध-द्रव्य देती है, जो बहिन होवे तो अपूर्व वस्त्र देती है, जो स्त्री हो तो सब ऐश्वर्यसे सबको पूर्ण कर देवे, परंतु दूसरी स्त्रीके साथ शयन करना वर्जित करे, इसके विरुद्ध वर्ताव करनेसे नाशभावको प्राप्त होवेगा ॥

॥ अथ मनोहरीसाधनम् ॥

नदीसंगमे गत्वा चन्दनेन मण्डलं कृत्वा अगरु-धूपं दत्त्वा मासैकोपरि आगतायै पूजयेत्। यदा आगच्छति तदा चंदनेनार्घो दीयते, पुष्पफलै-

रेकचित्तेनार्चनं कर्तव्यम् । अर्धरात्रे नियतमागच्छति । आगतायां सत्यामाज्ञां देहि सुवर्णशतं च प्रतिदिनं ददाति ॥

अर्थ—अब मनोहरीका साधन लिखते हैं—नदीके संगममें जाकर चन्दनसे मण्डल करके अगरुकी धूनी देकर पूजनादिसे यक्षिणीको प्रसन्न करे, जब वह एक मास उपरांत आवे तो उसका पूजन करे, यक्षिणीके आनेपर चन्दनसे अर्घ देवे, फूल और फलसे सावधानमन होकर पूजन करे, आधी रातको नियत समयपर आवे है, आनेसे नित्य प्रति सौ संख्यक सुवर्ण अर्थात् मुहर देवे है ॥

॥ अथ कनकवतीसाधनम् ॥

वटवृक्षतलं गत्वा मद्यमांसं च दापयेत् । सहस्रमेकं च मंत्रं जपेत् । एवं सप्तदिनं कुर्यात् अष्टमरात्रौ सा सर्वालंकारसंयुता आगच्छति, साधकस्य भार्य्या भवति, द्वादशजनानां वस्त्रालंकारभोजनानि ददाति ॥

अर्थ–अब कनकवतीका साधन लिखते हैं–वटके वृक्ष-तले जाकर मद्यमांसको देवे, एक सहस्रसंख्यक मंत्रोंका जप करे, इस प्रकार सात दिनपर्यन्त करे, आठवें दिन रात्रिमें सब अलंकार तथा वस्त्रोंसहित देवी यक्षिणी आवे साधककी स्त्री होकर रहे, बारह मनुष्योंको वस्त्र, अलंकार तथा भोजन देवे ॥

॥ अथ कामेश्वरीसाधनम् ॥

भूर्जपत्रे गोरोचनया प्रतिमां विलिख्य तां देवीं पूजयेत् । शय्यामारुह्य एकाकी सहस्रं जपेत् । मासान्ते वा पूजयेत् । घृतदीपो देयः । पश्चान्मौनी भूत्वा पूजयेत् । ततोऽर्धरात्रे नियतमागच्छति । साधकस्य भार्या भवति । प्रतिदिनं शयने दिव्यालंकारं परित्यज्य गच्छति । परस्त्री परिवर्जनीया इति ॥

अर्थ–अब कामेश्वरीका साधन लिखते हैं–भोजपत्रपर गोरोचनसे कामेश्वरीकी प्रतिमा बनाकर तिस देवीका

पूजन करे । फिर शय्यापर सवार होकर अकेले एक हजा-र जप करे । एक मासपर्य्यन्त करे । घीका दीपक जलावे । पश्चात् मौन होकर पूजन करे । अनन्तर अर्धरात्रिसमय देवी आवेगी । साधककी स्त्री होवेगी, प्रतिदिन शयन कर-के सुन्दर आभूषण छोडकर चली जाया करेगी । इसमें परस्त्रीगमन त्याग देवे ॥

॥ अथ रतिप्रियासाधनम् ॥

पटे चित्ररूपिणीं लिखित्वा कनकवस्त्रसर्वालंकारभूपितां उत्पलहस्तां कुमारीं जातीफलेन पूजयेत् । यदि भगिनी भवति तदा योजनमात्रात्स्त्रीमानीय समर्पयति वस्त्रालंकारभोजनं ददाति ॥

अर्थ–अब रतिप्रियासाधन लिखते हैं–वस्त्रपर देवीका चित्र लिखकर सुनहले वस्त्र अलंकार आदिसे भूषित करके कमल हाथमें लिये ऐसी कुमारीका पूजन जायफलसहित करे जो भगिनी होकर आवे तो एक योजन(४ कोश) प्रमाणसे स्त्रीको लाकर देवे और वस्त्रालंकार तथा भोजन देवे ॥

॥ अथ पद्मिनी नटी तथा अनुरागिणीसाधनम् ॥
कुंकुमेन भूर्जपत्रे प्रतिमां विलिख्य गंधाक्षतपुष्पधूपदीपविधिना सम्पूज्य त्रिसंध्यं त्रिसहस्रं जपेत् मासमेकं यावत् ततः पौर्णिमायां विधिवत्पूजा कर्तव्या घृतदीपं प्रज्वालयेत् सकलरात्रिपर्यन्तं जपेत् अत्र केवलमंत्रभेदाः प्रभाते नियतसमये आगच्छति दिव्यरसायनं ददाति इति॥

अर्थ-अब पद्मिनी नटी तथा अनुरागिणीका साधन लिखते हैं-केशरसे भोजपत्रपर जिस देवीकी आराधना करना चाहे उसकी प्रतिमा बनाय चन्दनाक्षत, फूल, धूप, दीप आदिसे विधिपूर्वक पूजन करे, तीनों सन्ध्याओंमें तीन सहस्र जप करे, प्रतिदिन इस प्रकार मासपर्यन्त करे, अनन्तर पौर्णमासीके दिन विधिवत् पूजा करे, यहां केवल मंत्रका भेद है। पद्मिनी, नटी, अनुरागिणी इनमेंसे जिसको साधन करे उसका मंत्र जपे, घीका दीपक जलावे, प्रातःसमयमें आवे, दिव्यरसायनको देवे है। नटीदेवी सुंदर वस्त्रा-

भूषणोंको देती है और नृत्य दिखाती है। अनुरागिणी देवी वस्त्रालंकारोंको देके प्रसन्न करनेवाली मधुर वाणीसे सन्तुष्ट करती है ॥

॥ अथ भूतवादः ॥

भूतवादं प्रवक्ष्यामि यथा रावणभाषितम् ॥
येनैव ज्ञातमात्रेण शत्रवो यांति वश्यताम् ॥२॥
निर्यासं शाल्मली चैव बीजानि कनकानि च ॥
भावयेत्सप्तरात्रेण भक्ष्ये पाने च दीयते ॥ ३ ॥
ततो भक्षणमात्रेण ग्रहैः संगृह्यते नरः ॥
शर्करादुग्धपानेन सुस्थो भवति नान्यथा ॥ ४ ॥
निर्यासं सल्लकीनां च बीजानि कनकस्य च ॥
पष्टिकाचूर्णयुक्तानि भावयेत्सप्तवासरम् ॥ ५ ॥
खाद्यपानसमायोगाद् ग्रहो माहेश्वरो भवेत् ॥
शर्करादुग्धपानेन सुस्थो भवति नान्यथा ॥ ६ ॥

अर्थ—अब भूतवाद कहते हैं—अब भूतवाद लिखता हूं जो शिवजीकी वाणीसे निकला गया मुझ रावण करके

वर्णन किया जाता है, जिसके जानने मात्रसे सब शत्रु वश-
में होते हैं ॥ २ ॥ सेमलके बीजका काढा तथा धतूरेके
बीज इनको उस काढेमें सात दिनपर्यन्त भावना देवे
और खानपानमें देवें ॥ ३ ॥ तो भक्षणमात्रसे उसको ग्रह
ग्रहण कर लेवेगा फिर शक्कर दूध पीनेसे शरीर आरोग्य हो
जावेगा ॥ ४ ॥ तथा सालईवृक्षके काढेमें धतूरेके बीजकी
भावना देके साठीके चूर्णमें मिलाय फिर सात दिवस भाव-
ना देवे ॥ ५ ॥ इसको खानपानमें लानेसे माहेश्वर नाम
ग्रह ग्रसता है, शक्कर और दूधके पीनेसे आनन्दचित्त हो
जाता है ॥ ६ ॥

॥ अथ मंत्रवादः ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मंत्रवादं सुदुर्लभम् ॥
येन विज्ञानमात्रेण सर्वसिद्धिः प्रजायते ॥ ७ ॥
ॐकाली कंकाली किलकिले स्वाहा, अनेन मंत्रेण
मल्लिकापुष्पं सहस्रं जुहुयात् कंकाली वरदा भवति
सुवर्णमाषचतुष्टयं ददाति । प्रत्यहं सहस्रहवनेन ॥

ॐ ठिरिमिठठः । अनेन चतुःपंकजचूर्णं घृतमधुभ्यां सह होमयेत् सर्वदा सुखी भवेत्॥ ॐ नमोच्छिष्टचांडालिनि कंकालमालाधारिणि साधु २ त्रैलोक्यमोहिनी प्रकांडक्षोभिनी शत्रूणां क्षोभय क्षोभय हुं फट् स्वाहा ॥ इति क्षोभिनीमंत्रः ॥ ॐ नमो भगवति दुर्वचनी किलिकिलि वाचाभंजनी मुखस्तंभनी स्वाहा ॥ सर्वजनमुखस्तंभः ॥ ॐ ह्रीं थूं हूं स्वाहा ॥ अनेन विल्वसमिधं घृताक्तां जुहुयात् । समस्तजानपदाः किंकरा भवन्ति । यदि वटन्यग्रोधसमिधं घृताक्तां होमयेत् सहस्रैकाहुतिं नित्यं दद्यात् तदा स्त्री वश्या भवति नाऽत्र सन्देहः ॥ ॐ ऐं वद वद वाग्वादिनी वागीश्वरी नमः । कवित्वं जायते न संदेहो नित्यं सहस्रैकजप्तेन ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे यक्षिणीसाधनं नाम नवमः पटलः ॥ ९ ॥

अर्थ—अब मंत्रवाद लिखते हैं—अब दुर्लभ मंत्रवादको आगे वर्णन करूंगा, जिसके जानने मात्रसे सब सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ७ ॥ ॐ काली० इत्यादिमंत्रसे एक हजार चमेलीके फूलोंका हवन एक सहस्र घी मिलाय करे तो काली वर देनेवाली होती है, चार मासे सुवर्ण नित्यप्रति देती है ॥ ॐ ठिरिमिठठः । इस मंत्रसे चारों प्रकारके कमलोंका चूर्ण घी सहत मिलाय नित्य एक सहस्र हवन करे तो सदैव सुखी होवे॥ॐ नमोच्छिष्टचांडालिनी० इत्यादि मंत्र क्षोभिनीदेवीका है, इसका जप करने व हवन करनेसे शत्रुओंको क्षोभ होता है॥ ॐ नमो भगवति० इत्यादि मंत्र जपने व हवनसे सब जनोंका मुखस्तंभन होता है ॥ ॐ ह्रीं ध्रूं हूं स्वाहा । इस मंत्रसे बिल्वपत्रकी समिधा ले घी मिलाय हवन करे तो सब मनुष्य सेवकसमान हो जाते हैं तथा जो वट और शमीवृक्षकी समिध घीमें बोर एक हजार आहुति नित्यप्रति करे तो स्त्री वश होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ ॐ ऐं वद० इत्यादि मंत्र नित्यप्रति एक हजार

जपनेसे कविता करनेकी शक्ति उत्पन्न होती है अर्थात् कवि हो जाता है ॥

इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते उड्डीशतंत्रे भाषायां यक्षिणीसाधनं नाम नवमः पटलः ॥ ९ ॥

अथ दशमः पटलः ॥ १० ॥

तत्रेन्द्रजालकौतुकम् ॥ ईश्वर उवाच ॥ इन्द्रजालं प्रवक्ष्यामि पार्वति शृणु यत्नतः ॥ येन विज्ञातमात्रेण ज्ञायते सर्वकौतुकम् ॥ १ ॥ आदौ भूतकरणम् ॥ आदौ भूतकरं वक्ष्ये तच्छृणुष्व समासतः॥ भल्लातकरसे गुंजां विषचित्रकमेव च ॥२॥ कपिकच्छुकरोमाणि चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ॥ एतच्चूर्णप्रदानेन भूताकरणमुत्तमम्॥३॥ तस्य रूपं प्रवक्ष्यामि ज्ञायते यैस्तु लक्षणैः॥ अंगानि घिमघिमायंति मूर्छन्ति च मुहुर्मुहुः ॥ एतद्रूपं भवेद्यस्य तद्भूतावेशलक्षणम् ॥४॥

अर्थ—अब दशवें पटलमें इन्द्रजाल कौतुक लिखते हैं—श्रीशिवजी बोले हे पार्वति ! इन्द्रजालको वर्णन करूंगा जिसके जाननेसे सब कौतुक जाने जाते हैं ॥ १ ॥ प्रथम भूतकरण कहता हूं सावधान होकर श्रवण करो, भिलायेके रसमें घुँघुची, विष, चीता ॥ २ ॥ किंवाचके रोम इनको मिलाय पीसकर महीन चूर्ण करे, इस चुर्णके देनेसे भूत उसको पकड लेता है ॥ ३ ॥ उसका रूप कहता हूं जिस लक्षणोंसे वह जाना जाता है, अंग सब धिमधिमाने लगे तथा अंग टूटे और वारंवार मूर्छित होवे इस प्रकार रूप जिसका होवे उसको भूतावेशलक्षण जानना ॥ ४ ॥

चिकित्सां तस्य वक्ष्यामि येन संपद्यते सुखम् ॥
उशीरं चन्दनं चैव प्रियंगुं तगरं तथा ॥ ५ ॥
रक्तचन्दनकुष्टं च लेपो भूतविनाशकः ॥ ६ ॥
ॐ नमो भगवते उड्डामरेश्वराय कुहुनी कुर्वती स्वाहा ॥ शताऽभिमंत्रितं कृत्वा ततो सुस्थो भविष्यति ॥ ७ ॥

अर्थ–अब उसकी चिकित्सा वर्णन करता हूं, जिसके करनेसे सुख होता है, खस, चन्दन, कांगनी, तगर ॥ ५ ॥ तथा लाल चन्दन, कूठ इन औषधियोंका लेप भूतबाधाको विनाश करता है ॥ ६ ॥ ॐ नमो भगवते० इत्यादि मंत्रसे सौ वार अभिमंत्रित करे तो इनके करनेसे आनन्दचित्त होवेगा ॥ ७ ॥

॥ औषधीकल्पः ॥

औषधी परमा श्रेष्ठा गोपितव्या प्रयत्नतः ॥ यस्याः प्रयोगमात्रेण देवता याति वश्यताम् ॥८॥ शनिवासरे ग्रामस्योत्तरदिशि लघुकंटकारिमूलं लोहितपाटलवस्त्रेण संयम्य शुचिर्भूत्वा निमंत्रयेत् । आदित्यवासरे खदिरकाष्ठकीलकेन नम्रीभूयोत्पाट्य मुक्तकेशो गृहीत्वा तत्क्षणात्स्त्रीपार्श्वे पेषयेत् सा वशीभवति नात्र संदेहः ॥ ९ ॥

अर्थ–अब औषधीकल्प लिखते हैं–परम श्रेष्ठ यह औषधिकल्प यत्नपूर्वक छिपानेके योग्य है, जिसके प्रयोग

मात्रसे देवता वश हो जाते हैं ॥८॥ शनिवारके दिन ग्रामके उत्तरदिशामें काले वा लाल सपेद वस्त्र पहिरकर पवित्र होकर छोटी कटाईको न्यौत आवे, रविवारके दिन प्रातःसमय खैरकी लकडीकी कलिसे अपने शिरकेश मुक्त करके अर्थात् चोटी खोलकर नग्न होकर उखाड लावे, तिसको लाकर स्त्रीके पास रख देवे तो वह स्त्री निःसंदेह वश हो जावेगी ॥९॥

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः । इत्यनेन मंत्रेण
धीमान् पंचजातीनि फलानि पंचप्रकाराक्षताः
पंचवर्णपुष्पाणि स्थिरचित्तेन मंत्री कलशोपरि
फलं प्रविन्यसेत् पूजयेत् नित्यं सहस्रं जपेच्च ॥
अपुत्रा लभते पुत्रं दुर्भगा सुभगा भवेत् ॥
अनेनैवाभिषेकेण कन्या प्राप्नोति सत्पतिम् ॥१०॥
मंत्रावधिप्रयोगेण सर्वाः सिद्ध्यंति सिद्धयः ॥
नराभिचारिताः क्रूरैः शुद्धदेहा भवन्त्यपि ॥ ११ ॥
ये चान्ये विघ्नकर्तारश्चरंति भुवि राक्षसाः ॥
ते सर्वे प्रलयं यांति सत्यं देवि वदामि ते ॥ १२ ॥

सकृदुच्चरितो मंत्रो महत्पुण्याय जायते ॥
ब्रह्महत्यादयो दोषाः क्षयं यांति न संशयः ॥१३॥
ॐ घंटाकर्णाय स्वाहा । इति मंत्रं सप्तवारं जपित्वा
ग्रामं प्रविशेत् तदा विशेषभोजनं प्राप्नोति ॥१४॥

अर्थ–ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षौं क्षः । इस मंत्रसे बुद्धिमान पांच जातिके फल, पांच प्रकारके अक्षत, पांच रंगके फूल इन सामग्रियोंसे मन्त्रपूर्वक सावधानचित्त होकर विधिसे कलश स्थापन कर फल चढावे, पूजन करे; नित्य प्रति एक सहस्र जप करे तो पुत्रहीन स्त्रीको पुत्र प्राप्त होवे, दुर्भगा सुभगा होवे तथा इस प्रयोगके करनेसे कन्या उत्तम पति पावे ॥ १० ॥ मंत्रोक्त अक्षरोंकी अवधि अर्थात् ६ लक्ष प्रयोगमें सब सिद्धि होवे है तथा सब अभिचारोंमे मनुष्य शुद्धदेह हो जावे ॥ ११ ॥ जो अन्यभी विघ्न करनेवाले पृथिवीपर राक्षस विचरते हैं, वे सब नाशको प्राप्त होवें, श्रीशिवजी कहते हैं, हे देवि ! यह मैं सत्य कहता हूं ॥ १२ ॥ एक वारभी मंत्र उच्चारण

करनेसे महापुण्य होता है और ब्रह्महत्या आदि दोष निःसन्देह नाश हो जाते हैं १३ ॥ ॐ घंटाकर्णाय स्वाहा । यह मंत्र सात वार जप कर ग्राममें प्रवेश करे तो विशेष भोजन प्राप्त होता है ॥ १४ ॥

रविवारे शुचिर्भूत्वा शिग्रुमूलान्युत्पाटय बहुजलेन प्रक्षालयेत् ततस्तीक्ष्णशस्त्रेण छित्त्वा खंडखंडान्कारयेत् । ततश्छायायां शुष्काणि कृत्वा श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् । नूतनभाण्डे निधापयेत् बिडालपदमात्रं भक्षयेत् । वातरोगं नाशयति इन्द्रियबलं भवति क्षुधा च जायते जठरास्थिताश्च सर्वे रोगा विनश्यन्ति हस्तपादशिरपीडा न भवति रक्तविकारदोषो न जायते ॥

अर्थ-रविवारके दिन पवित्र होकर सहजनेकी जडको उखाडकर बहुतसे जलमें धोवे, अनंतर पैने हथियारसे काटकर खण्ड खण्ड करे । फिर छायामें सुखाकर महीन चूर्ण बना लेवे । फिर नवीन हांडीमें रख छोडे । फिर

विडालपदमात्र भक्षण करे तो वातरोगका नाश होता है, इंद्रियें बलवान् होती हैं, क्षुधाभी होती है और उदरमें स्थित सम्पूर्ण रोग नाश हो जावे हैं, हाथ पैर और शिरकी पीडा नहीं होती हे । रक्तविकारदोष नही होवे है ॥

शिग्रुमूलं चार्द्रकराजिका कटुतैलमेतत्समं कृत्वा नूतनभांडे निधाय मासैकेन संधान साध्यते । ततः प्रहरैकोपरि खण्डमेकमुद्धृत्य प्रतिदिन भक्षयेत् । तदा उदरांतरव्याधिमांसग्रन्थिप्लीहगुल्मारुचिश्वासकासज्वरजठरकुष्ठपामाविचर्चिकादयो दोषा· सर्वे नाशमायान्ति नात्र सन्देहः ॥

अर्थ—सहजनेकी जड, अदरख, राई, कडुवा तेल इन सबको समान भाग लेकर नवीन हांडीमें एक मासतक रखकर साधन करे, अनन्तर एक प्रहर व्यतीत करके प्रतिदिन बलानुमान मात्रा भक्षण करे तो उदर (पेट) के मध्यकी व्याधि, मासग्रन्थि, प्लीह, गुल्म, अरुचि, श्वास, कास, ज्वर,

जठररोग, कुष्ठ, दाद, खाज, फोडा, फुंसी आदि रोग सब नाशको प्राप्त होते हैं इसमें संशय नहीं करना ॥

ॐ नमः षण्मुखाय शक्तिहस्ताय मयूरवाहनाय औषधिके निर्दोषे भव स्वाहा ॥ अनेन मंत्रेण चतुर्दश्यां तिथौ शुचिर्भूत्वा मयूरशिखा समुत्पाट्यते तदा महाप्रभावयुक्ता भवति गव्यघृतेन सह नस्यं गृह्यते तदेन्द्रियबलं भवति घृतमधुभ्यां सहावलेहेन गलरोगो न जायते । एकं वर्षे क्रियमाणे देवतुल्यो भवति सर्वे रोगा नश्यंति ॥

अर्थ—ॐ नमः षण्मुखाय० इत्यादि मंत्रसे चतुर्दशी तिथिको पवित्र होकर मयूरशिखा नाम औषधिको उखाड लावे सो वह महाप्रभावशाली औषधि उसको लाकर गौके घीके साथ नस्य लेवे तो इन्द्रियोंमें बल होता है तथा घी सहतके साथ चटनी बनाय चाटनेसे गलरोग नहीं होता है, एक वर्ष पर्यन्त इस मयूरशिखाका सेवन करनेसे देवताके तुल्य होता है और सब रोग नाश हो जाते हैं ॥

त्रिफलापंचनिंबभृंगराजमयूरशिखा एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् । मधुना सह लेहयेत् भोजनं च यथाहारं कारयेत् । एतच्चूर्णं सुरैरपि दुर्लभम् । मयूरशिखाचूर्णं गव्यघृतेन तक्रेण सह दीयते तदा कृमयः पतंति । यदा लवणेन सह दीयते तदा मृत्तिकादोषं नाशयति । यदि गव्यघृतेन सह दीयते तदा आमानुबन्धं नाशयति । गुडूचीशुंठीचूर्णं मयूरशिखाचूर्णं च गोमूत्रेण सह दीयते एकीकृत्य भक्षितम् तदा हस्तपादादिमुखशोभा भवति । एतच्चूर्णं शिरीषवल्कलचूर्णं च गव्यघृतेन सह यदा दीयते तदा वन्ध्या गर्भं दधाति । एतच्चूर्णं लक्ष्मणासहितं गव्यदुग्धेन सह यस्यै दीयते सा गर्भवती भवति । एतच्चूर्णं कपित्थफलेन सह याऽपुत्रा खादति तस्याः पुत्रो भवति नान्यथा । एतच्चूर्णं श्वेतकंटकारिकामूलस्य चूर्णं समं एकीकृत्य

ककुभफलक्काथेन ऋतुसमये आदौ वंध्यायै दीयते तस्याः शरीरं शुद्धं पश्चादृतुसमयोपरि पंच दिनानि दापयेत् तदा गर्भधारणं भवतीति निश्चितम् ॥ इति मयूरशिखाकल्पः ॥

अर्थ-त्रिफला (आंवला, हर्र, बहेडा), पांच निंब, भांगरा, मोरशिखा यह सब समान भाग लेकर महीन चूर्ण पीस लेके सहतके साथ सेवन करे तो भोजन यथोचित करे यह चूर्ण देवताओंकोभी दुर्लभ है। मोरशिखाका चूर्ण गायके घीके साथ और छाछके साथ देवे तो कीडे गिर जाते हैं। तथा जो लवणके साथ देवे तो मृत्तिकादोष नाश हो जाता है। जो गौके घीके साथ देवे तो आमवंधदोष नाश हो जाता है। तथा गिलोय और सोंठका चूर्ण व मोरशिखाका चूर्ण गोमूत्रके साथ एकमें करके देवे तो हाथ पाव मुख आदिकी शोभा होती है। यह चूर्ण सिरसके वक्कलके चूर्णको घीके साथ जो देवे तो वन्ध्या गर्भको धारण करती है। तथा यह चूर्ण लक्ष्मणा-

सहित गौके दूधके साथ जिस स्त्रीको देवे सो गर्भवती होवे । यह चूर्ण कैथके फलके साथ पुत्रहीन खावे तो उसके पुत्र होता है इसमें अन्यथा नहीं जानना तथा यह चूर्ण सपेद कटाईकी जडके साथ ककुभ (कोहवृक्ष) के काढेके सहित ऋतुसमय प्रथम वन्ध्याको देवे तो उसका शरीर शुद्ध होवे, पश्चात् ऋतुसमयके उपरान्त पांच दिन-पर्यन्त देवे तो निश्चय वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण करती है ॥ यह मयूरशिखाकल्प भया ॥

॥ पुष्टिकारकयत्नः ॥

माषैस्तु पायसं कृत्वा घृतशर्करया युतम् ॥
भुंजानः स्त्रीशतं भुंक्ते हृष्टः सन्तुष्टमानसः ॥१॥
अश्वगंधां समरिचां तिलान्शर्करया युतान् ॥
हेमन्तकाले यो भुंक्ते मांसाशी पुष्टिवर्धनः ॥ २ ॥

अर्थ—उडदोंकी खीर बनाकर घीशक्कर मिलाय खानेसे सौ स्त्रियोंको भोग करे और आनन्द व सन्तुष्टचित्त रहे॥१॥ असगन्ध, मिर्च, तिल, शक्कर इनको मिलाय हेमन्तकालमें

जो भक्षण करे वह हृष्टपुष्ट शरीरवाला हो जावे ॥ २ ॥

॥ गाढीकरणम् ॥

कर्पूरं चैव कस्तूरीं जातीफलसमाक्षिकम् ॥
गुह्यस्य लेपान्नारीणां गाढीकरणमुत्तमम् ॥ ३ ॥
धातकी चाश्वगन्धा च शाल्मली खादिरं जलम् ॥
एतेन क्षालयेद्योनिं ततो विस्तीर्णतां व्रजेत् ॥४ ॥

अर्थ–कपूर, कस्तूरी, जायफल, सहत इन सबको लेके लेप बनाय गुदासे भगपर्यन्त स्त्री लेपन करे तो यह उत्तम गाढीकरण प्रयोग है ॥३॥ धाई, असगन्ध, सेमली, खैरका जल इनको लेके योनिको प्रक्षालन करे तो भग विस्तारयुक्त हो जावे ॥ ४ ॥

कटुत्रिकं विडंगं च पचेत्तैलं समाक्षिकम् ॥
प्रयत्नतस्तस्य लेपाद्योनिः संकोचतां व्रजेत् ॥५॥
नालानि चोत्पलानां च नारीक्षीरेण पेषयेत् ॥
दशवारप्रसूतापि कन्यात्वमुपजायते ॥ ६ ॥

कुंकुमं हरतालं च पिष्ट्वा योनिं प्रलेपयेत् ॥
त्रिरात्रं पंचरात्रं वा योनिर्भवति संवृता ॥ ७ ॥

अर्थ–त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपर), वायविडंग इनको तेलमें पचावे फिर सहत मिलाय यत्नपूर्वक उसका लेप योनिपर करनेसे योनि संकोचयुक्त अर्थात् सिमिट जावे छोटी हो जावे ॥ ५ ॥ कमलोंके नाल स्त्रीके दूधके साथ घिसे अर्थात् पीसकर योनिपर लेप करे तो दशबार पुत्र जनी भईभी स्त्री कन्याके भगके समान भगवाली हो जावे ॥ ६ ॥ केशर, हरताल पीसकर तीन रात्रि वा पांच रात्रि योनिपर लेप करे तो योनि छोटी हो जाती है ॥ ७॥

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ इत्यघोरमंत्रः ॥ गोशृंगं सर्पनिर्मोकी कार्पासास्थिवचान्वितम् ॥ अनुविष्टा तुषा केशा मरिचं बृहतीद्वयम् ॥ ८ ॥ द्वे निशे पद्मकं पित्तं मायूरं कुंदुरूफलम् ॥ धूपो भूतग्रहादीनां शाकिनी-

फणिनामपि ॥ उच्छेदं कुरुते शीघ्रं तमसां भास्करो यथा ॥ ९ ॥

अर्थ–ॐ अघोरेभ्यो० यह अघोरमंत्र है इस मंत्रसे गोका सींग, सांपकी केंचली, विनौर, वच इनको लेने तथा गोबर भूसी, बाल, मिर्च, दोनों कटाई ॥ ८ ॥ दोनों हल्दी, कमलगट्टा, पित्तपापडा, मोरशिखा, कुंदुरूका फल इन सबकी धूप बनाय देनेसे भूतग्रह आदिक तथा शाकिनी डाकिनी सर्प आदिको शीघ्र दूर करे जैसे अंधकार सूर्यसे नाश हो जाता है ॥ ९ ॥

॥ ज्वरवारणम् ॥

श्रीवेष्टकं घृतं हिंगु देवदारु गवाक्षि च ॥
गोबालाः सर्षपाः केशाः कटुकी निम्बपल्लवाः ॥१०
द्वे बृहत्यौ वचा चव्या कर्पासास्थिरुपा यवाः ॥
छागरोमाणि मायूरपिच्छमेकत्र मेलयेत् ॥ ११ ॥
सुपिष्टो वत्समूत्रेण मृद्भाण्डे धारयेद्बुधः ॥
एष माहेश्वरो धूपो धूपितोन्मत्तरोगिणे ॥ १२ ॥

ग्रहरक्षःपिशाचाद्याः पन्नगा भूतपूतनाः ॥
शाकिन्येकाहिकद्वित्रिज्वराश्चातुर्थिकांतकाः १३॥
नश्यन्ति क्षणमात्रेण ये चान्ये विघ्नकारिणः ॥१४॥

अर्थ–ज्वरनिवारणोपाय वर्णन करते हैं–लोबान, घी, हींग, देवदारू, इन्द्रवारुणी, गोदंती, सुगंधवाला, सरसों, केश, कुटकी, नींबके पत्ते ॥ १० ॥ दोनों कटाई, वच, चव्य, बिनौले, सूखे जव, बकरीके रोम, मोरशिखा यह सब लेकर एकमें मिलाय लेवे ॥ ११ ॥ अनन्तर बैलके मूत्रसे पीसकर मिट्टीके कोरे पात्रमें रख छोडे, यह माहेश्वरधूप है, उन्मत्त रोगीको देवे ॥ १२ ॥ तो ग्रह, राक्षस, पिशाच आदि तथा नाग, भूत,पूतना, शाकिनी, ग्रह, एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक ज्वर॥ १३॥ तथा जे अन्यभी विघ्नकारी रोग हैं वे सब नाशको प्राप्त होते हैं१४

गुग्गुलं लशुनं सर्पिः कंचुकः कपिरोम च ॥
शिखिकुक्कुटयोर्विष्ठा मलः पारावतस्य च ॥ १५॥

एतद्धूपाद् ग्रहाः क्रूराः पिशाचा भूतपूतनाः ॥
डाकिन्यो हि ज्वरा रौद्रा नश्यन्ति स्पर्शमात्रतः१६

अर्थ—गूगल, लहसन, घी, सांपकी कांचली, वानरके रोम, मोर ,मुर्गाकी विठा, कबूतरकी वीठ ॥ १५ ॥ इन वस्तुओंको धूप देनेसे क्रूर ग्रह, पिशाच, भूत, पूतना, डाकिनी, ज्वर आदि स्पर्शमात्रसे नाशको प्राप्त होते हैं॥ १६

अंजनं राजिकाकृष्णामरिचैर्भूतनाशनम् ॥
नागरं वकुचीनिम्ब एतद्वा रौद्रभंजनम् ॥ १७ ॥
सहिंगुवारिणा पीता भूकदम्बस्य मूलिका ॥
शाकिनीग्रहभूतानां निग्रहं कुरुते ध्रुवम् ॥ १८ ॥
विशालायाः फलं पक्वं हितं गोमूत्रनस्यतः ॥
ब्रह्मराक्षसभूतानि पद्मं वा मरिचान्वितम् ॥ १९ ॥
पुष्ये कूष्मांडतोयेन निशां सम्पिष्टय निर्मिताम्॥
गुटिकांजनमात्रेण ग्रहभूतविनाशिनी ॥ २० ॥
ॐ नमो भगवते रुद्राय नमः क्रोधेश्वराय नमो ज्योतिःपतंगाय नमो नमः सिद्धरूपो रुद्रो ज्ञापयति

स्वाहा॥सर्पपैः सप्तवारं जप्तैः हृद्ग्रहो मुंचति॥२१॥

अर्थ–अंजन (सुर्मा), राई, काली मिर्च इनका अंजन भूतको नाश करता है तथा सोंठ, बाकुची, नींब इनका अंजनभी नेत्रोंमें करनेसे भूतग्रह नाश हो जाता है ॥ १७ ॥ हींगके जलमें कुलाहलवृक्ष अथवा अजवायनकी जडको पीवे तो निश्चय शाकिनीग्रह तथा भूतादि ग्रहोंका नाश करे ॥ १८ ॥ इन्द्रवारुणीका पका भया फल लेके उसका नस्य बनाय गोमूत्रके साथ सुंघावे, अथवा मिर्च और कमलगट्टाके चूर्णका नस्य देवे तो ब्रह्मराक्षस और भूतादि दोप नाश हो जावें ॥ १९ ॥ तथा कुम्हडेके फूलोंको जलमें पीसकर गोली बना लेवे फिर उसका अंजन करनेमे वह गुटिका भूतग्रहकी नाश करनेवाली होती है ॥ २० ॥ ॐ नमो भगवते० इत्यादि मंत्र पढकर सरसों लेकर सात वार मंत्रसे अभिमंत्रित कर मार देनेसे भूतग्रह छूट जाता है ॥ २१ ॥

ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये पिशाचाधि

पतये आवेशय २ कृष्णपिंगल फट् स्वाहा ॥ अनेन ज्वरमावेशयति ॥ ॐ नमो भगवते ॥ रुद्राय छिन्धि २ ज्वरस्य ज्वरोज्वलितकरालशूलपाणे हुं फट् स्वाहा । एष निग्रहं करोति ॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय भूताधिपति हुं फट् स्वाहा । सर्वज्वरानुपशाम्यति ॥

स्वाहा॥सर्षपैः सप्तवारं जप्तैः हृढग्रहो मुंचति॥२१॥

अर्थ–अंजन (सुर्मा), राई, काली मिर्च इनका अंजन भूतको नाश करता है तथा सोंठ, बाकुची, नींब इनका अंजनभी नेत्रोंमें करनेसे भूतग्रह नाश हो जाता है ॥ १७ ॥ हींगके जलमें कुलाहलवृक्ष अथवा अजवायनकी जडको पीवे तो निश्चय शाकिनीग्रह तथा भूतादि ग्रहोंका नाश करे ॥ १८ ॥ इन्द्रवारुणीका पका भया फल लेके उसका नस्य बनाय गोमूत्रके साथ सुंघावे, अथवा मिर्च और कमलगट्टाके चूर्णका नस्य देवे तो ब्रह्मराक्षस और भूतादि दोष नाश हो जावें ॥ १९ ॥ तथा कुम्हडेके फूलोंको जलमें पीसकर गोली बना लेवे, फिर उसका अंजन करनेसे वह गुटिका भूतग्रहकी नाश करनेवाली होती है ॥ २० ॥ ॐ नमो भगवते० इत्यादि मंत्र पढकर सरसों लेकर सात वार मंत्रसे अभिमंत्रित कर मार देनेसे भूतग्रह छूट जाता है ॥ २१ ॥

ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये पिशाचाधि-

मंत्रस्तु ॥ ॐ नमो भगवती गृही गृही वाराही सुभगे ठठः ॥
घृतगुग्गुलधूपेन सुस्थो भवति नान्यथा ॥ २७ ॥

अर्थ—अब उन्मत्तीकरण कहते हैं—धतूरेके बीज व लोहकिट्टका चूर्ण तथा गगौंदाकी बीट व कंजाके बीज इन सबको बराबर भाग लेकर ॥ २५ ॥ चूर्ण करे, यह उन्मत्तचूर्ण भक्षण करनेसे उसी क्षण मनुष्य उन्मत्त हो जाता है, इक्कीस वार मंत्रसे अभिमंत्रित करके देवे॥२६॥ फिर खानपानमें देवे तो उन्मत्त होवेगा, मंत्र यह है ॥ ॐ नमो भगवती गृही गृही वाराही सुभगे ठठः॥ घी और गूग-लकी धूप देनेसे सुस्थ होवे, यह सत्य है अन्यथा नहीं॥२७

॥ विस्फोटीकरणम् ॥

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि योगं परमदुर्लभम् ॥
शत्रूणामपकाराय यथा मम प्रकाशितम् ॥ २८ ॥
येन योजितमात्रेण शत्रुदेहे समन्ततः ॥
विस्फोटकाश्च जायन्ते घोराः शत्रुविनाशकाः २९॥

अर्थ-सद्योजात० इत्यादि मंत्र तथा अघोरमंत्रको मनविषे धारण करनेसे प्राणियोंका ज्वरनाश हो जाता है, सम्पूर्ण सिद्धोंसे वन्दित श्रीरुद्रजीके मंत्रका प्रभावही ऐसा है ॥ २२ ॥ तथा इस विद्यामें प्रयुक्त हो वटवृक्षके पत्ते-पर यह मंत्र लिखे, कोयलेसे लिखे तो देखनेही मात्रसे तीक्ष्ण ज्वर नाश हो जाता है ॥ २३ ॥ तथा यह मंत्र लिखकर दहिनी भुजापर बांधनेसे नित्य आनेवाला ज्वर नाश हो जाता है और १०८ वार मंत्र जपनेसे नित्यज्वर नाश होता है ज्वरसे ग्रस्तके अर्थ यह मंत्र आचार्य जपे तो ज्वर शान्त हो जावे ॥ २४ ॥

॥ उन्मत्तीकरणम् ॥

अलं कनकबीजानि धूर्तचूर्णसमं ततः ॥
गृहचेटकविष्ठां तु तथा बीजकरंजकम् ॥ २५ ॥
एतदुन्मत्तकं चूर्ण भक्षणात्तत्क्षणाद्व्रजेत् ॥
एकविंशतिवारानभिमंत्र्य प्रयत्नतः ॥ २६ ॥
खाने पाने प्रदातव्यं तदोन्मत्तो भविष्यति ॥

मंत्रस्तु ॥ ॐ नमो भगवती गृही गृही वाराही सुभगे ठठः ॥

घृतगुग्गुलधूपेन सुस्थो भवति नान्यथा ॥ २७ ॥

अर्थ-अब उन्मत्तीकरण कहते हैं-धतूरेके बीज व लोहकिट्टका चूर्ण तथा गगौंटाकी वीट व कंजाके बीज इन सबको बराबर भाग लेकर ॥ २५ ॥ चूर्ण करे, यह उन्मत्तचूर्ण भक्षण करनेसे उसी क्षण मनुष्य उन्मत्त हो जाता है, इकीस वार मंत्रसे अभिमंत्रित करके देवे॥२६॥ फिर खानपानमें देवे तो उन्मत्त होवेगा, मंत्र यह है ॥ ॐ नमो भगवती गृही गृही वाराही सुभगे ठठः॥ घी और गूग-लकी धूप देनेसे सुस्थ होवे, यह सत्य है अन्यथा नहीं॥२७

॥ विस्फोटीकरणम् ॥

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि योगं परमदुर्लभम् ॥
शत्रूणामपकाराय यथा मम प्रकाशितम् ॥ २८ ॥
येन योजितमात्रेण शत्रुदेहे समन्ततः ॥
विस्फोटकाश्च जायन्ते घोराः शत्रुविनाशकाः २९॥

कीटकं षड्बिन्दुं च कृष्णवृश्चिकमेव च ॥
मूषकस्य शिरो ग्राह्यं मर्कटस्य तथैव च ॥ ३० ॥
एतच्चूर्णं यमो दंडं निर्वारं यत्सुरैरपि ॥
योजयेच्छत्रुसंघातैर्वस्त्रे शय्यासु यत्नतः ॥ ३१ ॥
विस्फोटाः सर्वगात्रेषु जायन्तेतिभयावहाः ॥
पीडया सप्तरात्रेण म्रियते नाऽत्र संशयः ॥ ३२ ॥

अर्थ–अब विस्फोटीकरण कहते हैं–श्रीशिवजी कहते हैं कि हे देवि ! अब आगे और प्रयोग वर्णन करते हैं जो योग परम दुर्लभ है, शत्रुगणोंके अपकारनिमित्त यथोचित हमसे प्रकाशित किया जाता है ॥ २८ ॥ जिसके करने मात्रसे शत्रुके शरीरमें विस्फोटक कहिये फोडा फुंसी आदि घोर पीडा देनेवाली तथा शत्रुओंके नाश करनेवाली उत्पन्न हो जावे ॥ २९ ॥ सर्प, भौंरा, काला बीछी, मूषक इनका तथा वानरका शिर ॥३०॥ यह चूर्ण यमदण्डसमान जानना, जिसके निवारण करनेको देवताभी समर्थ नहीं, यह चूर्ण शत्रुके मारनेसे शत्रुकी शय्यापर

वस्त्रोंपर अच्छे प्रकार डाल देवे ॥ ३१ ॥ तो उस वस्त्रको पहिरनेसे सब शरीरमें भयके देनेवाले फोडा फुंसी उत्पन्न हो आवें और अत्यन्त पीडा होकर सात दिनमें मृत्युको प्राप्त हो जावे ॥ ३२ ॥

॥ तथा च ॥

मातुलुंगस्य बीजानि पङ्कबिंदुविषमेव च ॥
कपिकच्छोश्च रोमाणि हिंगुभल्लातकं तथा ॥३३॥
एतानि समभागानि तथा तंदुलकारिका ॥
योजयेत्सर्वयत्नेन गोप्यमेतत्सुरैरपि ॥ ३४ ॥
योजयेच्छत्रुसंघाते प्रस्वेदं तं तु तद्भवेत् ॥
अग्निसंघा इव स्फोटा जायंते नाऽत्र संशयः॥३५॥
नीलोत्पलं सुकुमुदं तथा वै रक्तचन्दनम् ॥
कुक्कुटीपित्तसंयुक्तं पेषयित्वा प्रयत्नतः ॥ ३६ ॥
तदा लेपनसंयोज्यं ततः सम्पद्यते सुखम् ॥ ३७॥

अर्थ-बिजौरा नींबूके बीज तथा पीपलामूल, विष, कौंछके रोम, हींग, भिलावा ॥ ३३ ॥ इन औषधियोंको

समान भाग लेकर चांवलोंकी भूसी मिलाय अच्छे प्रकार यत्नसे धूनी देवे, यह गोप्य यत्न देवताओंसेभी छिपानेके योग्य है ॥ ३४ ॥ शत्रुके मारने निमित्त यह प्रस्वेद प्रयत्न करनेसे अग्निके समान दहकते हुएसे फोडा शत्रुके शरीरसे उत्पन्न हो जावें इसमें संशय नहीं करना ॥ ३५ ॥ नीलकमल, लालकमल वा सपेद कमल तथा लालचन्दन और मुरगीका पित्त मिलाय पीसे फिर इनका लेप करनेसे सुखी हो जाता है ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि कुष्ठीकरणमुत्तमम् ॥
यस्य योजितमात्रेण कुष्ठी भवति नाऽन्यथा ३८॥
भल्लातकरसं गुंजा तथा वै मंडुकादिका ॥
गृहगोधासमायुक्ता खाने पाने च दापयेत् ॥३९॥
सप्ताहाज्जायते कुष्ठं तीव्रपीडासमन्वितम् ॥
एतस्य प्रशमं वक्ष्ये यथा रौद्रप्रकाशितम् ॥ ४०॥
धात्रीखदिरनिंबानि शर्करासहितानि च ॥
विचूर्ण्य मधुसर्पिभ्यां जीर्णान्नेन प्रदापयेत्॥ ४१ ॥

शालिभक्तं पटोलं च तथा शीघ्रविपाचिनम् ॥
एतेन दत्तमात्रेण नरः संपद्यते सुखी ॥ ४२ ॥

अर्थ-अब अन्य उत्तम कुष्ठीकरणप्रकार वर्णन करूं-गा, जिसके करने मात्रसे मनुष्य कोढी होता है इसमें अन्यथा नहीं जानना ॥३८॥ भिलायेका रस, घुँघुची तथा मेंडक और गृहगोधीको मिलाय खानपानमें देवे ॥ ३९ ॥ तो सात दिवसमें अत्यन्त पीडासे युक्त कुष्ठरोग हो जावे ॥ अब इसके नाशनार्थ उपाय कहूंगा जैसा कि शिवजीने प्रकाशित किया है ॥ ४०॥ आंवला, खैर, नींब, शक्कर इनका चूर्ण शहत घी मिलाय पुराने चावलोंके साथ देवे ॥ ४१ ॥ पथ्यमें चांवलोंका भात, परवल तथा शीघ्र पच जानेवाले पदार्थ इनके देने मात्रसे मनुष्य सुखी हो जाता है ॥ ४२ ॥

॥ शिवाबलिः ॥ ईश्वर उवाच ॥

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि शिवाबलिमनुत्तमम् ॥
न जपो न तपश्चैव न होमो न च संयमः ॥ ४३ ॥

एकरात्रिप्रयोगेन सिद्धिदा परमा शिवा ॥
सर्वकार्येषु कर्तव्यं शिवापूजनमुत्तमम् ॥ ४४ ॥
वशीकरणमुच्चाटे तथा विद्वेषणे नृणाम् ॥
मारणे मोहने चैव स्तम्भने पुष्टिकर्मणि ॥ ४५ ॥

अर्थ—अब शिवावलिविधान वर्णन करते हैं—श्रीशिवजी बोले हे देवि! अब मैं उत्तम शिवाबलिको वर्णन करता हूं, इसमें न जप है, न तप है, न होम है, न संयम ॥ ४३ ॥ केवल एकरात्रिके प्रयोगमात्रसे श्रेष्ठ शिवा सिद्धिको देवे है। यह शिवाबलि सब कार्योंके विषे करना चाहिये इसका पूजन परम उत्तम है ॥ ४४ ॥ वशीकरण तथा उच्चाटनप्रयोगमें व मनुष्योंका विद्वेषण, मारण, मोहन, स्तंभन तथा पुष्टिकर्म इनमें शिवाबलि करना ॥ ४५ ॥

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां च विशेषतः ॥
महाष्टम्यां प्रयत्नेन होलिकादिवसे तथा ॥ ४६ ॥
एकरात्रिप्रयोगेण सर्वकार्यं प्रसिद्ध्यति ॥
एकांते च निराहारे स्वयं पाकं प्रकल्पयेत् ॥४७॥

तन्दुलं मांसभोज्यं च गोधूमान्नं सपूपकम् ॥
दधिमाषप्रकारं च पायसं शर्करायुतम् ॥ ४८ ॥
रक्षयेत्पाकगेहं च मूषमार्जारकैरपि ॥
यदि दूषति कोपिभ्यो जनयापाकगेहतः ॥ ४९ ॥
तदा न तृप्तिमायाति शिवा सिद्धिविधायिनी ॥
तस्माद्यत्नेन कर्तव्यं भोजनं विधिपूर्वकम् ॥ ५० ॥

अर्थ–अष्टमी, चतुर्दशी वा नवमी इन विशेष तिथि-योंमें अथवा महाअष्टमीके दिन तथा होलिकाके दिवस यत्नपूर्वक ॥ ४६ ॥ एक रात्रिको यह शिवाप्रयोग करनेसे सम्पूर्ण कार्योंकी सिद्धि होती है, एकांतमें निराहार होकर अपने आप पाकमें जाकर सब बलिका भोजन बनावे ॥ ४७ ॥ चावलोंका भात, मांस, गेहूंके मीठे पुआ, दही व उडदके पदार्थ (बडे आदि), खीर शक्कर मिली भई ॥ ४८ ॥ यह सब पदार्थ बनावे चौकाकी रक्षा मूसे बिल्ली आदिसे अच्छे प्रकार करे, जो यह पाकगेह किसीकीभी दृष्टि व स्पर्शसे दूषित हो जायगा

॥ ४९ ॥ तो सिद्धिकी देनेवाली शिवा तृप्त नहीं होवेगी, इस कारण यत्नसे विधिपूर्वक रक्षा करता हुआ भोजन पदार्थ बनावे ॥ ५० ॥

मंत्रं वक्ष्यामि भो देवि कार्ये कार्ये प्रयत्नतः ॥
येन सिद्धिर्भवेन्नृणां साधकानां सुखावहम् ॥ ५१ ॥
ॐ गृह्ण देवि महाभागे देवि कालाग्निरूपिणि ॥
शुभाशुभफलं व्यक्तं ब्रूहि गृह्ण बलिं तव ॥ ५२ ॥
ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं मे वशं कुरु २ स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकमुच्चाटय २ ठं ठं ठं ॥ २ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं रोगविमुक्तं कुरु २ ते नमो नमः ॥ ३ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं विद्वेषय २ फट् ॥ ४ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं शांतिं कुरु २ स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं

कार्यं कुरु २ स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं शत्रुं हन हन हुंहुंहुं स्वाहा ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं सिद्धिं मे दर्शय २ स्वाहा ॥ एवं विधानं यः कुर्यान्मांसेन मधुना सह ॥ क्षिप्रं भवति कार्य्याणि एकरात्रिप्रयोगतः ॥ ५३ ॥

अर्थ–शिवजी कहते हैं हे देवि ! अब कार्य कार्यमें क्रमपूर्वक यत्नसे पृथक् २ मंत्र वर्णन करता हूं, जिन मंत्रोंसे मनुष्योंको सुखदायिनी सिद्धि होवेगी ॥ ५१ ॥ प्रत्येक कार्यमें मंत्रार्थ इसी प्रकार है, हे देवि ! हमारे दिये हुए बलिको ग्रहण करो और हे कालाग्निस्वरूपिणि देवि ! शुभाशुभफल प्रगट करो और बलि ग्रहण करे तो कहो ॥ ५२ ॥ अब आगे मंत्र लिखे हैं जिनको साधकजन समझकर यथाकार्यमें उच्चारण करें ॥ इस प्रकार विधिपूर्वक जो मनुष्य मांस व शहतसहित शिवाको बलिदान करेगा, उसका एकही रात्रिके प्रयोगसे सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध होवे हैं ५३

यदि दत्तं बलिं खादेच्छिवा घोरनिनादिनी ॥
तदा कार्य्यं न ज्ञातव्यं सिद्धिर्न च शिवा भवेत्५४
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कर्तव्यं बलिमुत्तमम् ॥
स्मशानभूमौ कर्तव्यं दक्षिणस्यां दिशि प्रभो५५॥
मारणे दक्षिणमुखे सिद्धिकार्ये तु पश्चिमे ॥
उच्चाटने चोत्तरस्यां शान्तिकर्म्मणि प्राङ्मुखे५६॥
आकर्षणे तथाग्नेय्यां नैर्ऋते विद्वेषणं भवेत् ॥
वायव्यां मोहनं चैव ईशाने ज्ञानसिद्धये ॥ ५७ ॥
वश्याकर्षणकार्याणि वसन्ते कारयेद्बुधः ॥
शिशिरे मारणं प्रोक्तं शरदे शांतिकं तथा ॥५८॥

अर्थ–जो दी हुई बलिको घोर शब्द करनेवाली शिवा न खावे तो कार्य्यकी सिद्धि नहीं जानना, अर्थात् वह शिवा सिद्धि करनेवाली नहीं होती है ॥ ५४ ॥ इस कारण सब प्रयत्नोंसे उत्तम बलिदान करे, स्मशानभूमिमें करे, तथा दक्षिणदिशामें करे ॥ ५५ ॥ मारणप्रयोगकी सिद्धिके अर्थ दक्षिणदिशा तथा दक्षिणमुख होकर करे,

कार्यं कुरु २ स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं शत्रुं हन हन हुंहुंहुं स्वाहा ॥ ॐ घोरे घोरदर्शने शिवे बलिं गृह्ण २ अमुकं सिद्धिं मे दर्शय २ स्वाहा ॥ एवं विधानं यः कुर्यान्मांसेन मधुना सह ॥ क्षिप्रं भवति कार्य्याणि एकरात्रिप्रयोगतः ॥ ५३ ॥

अर्थ-शिवजी कहते हैं हे देवि ! अब कार्य कार्यमें क्रमपूर्वक यत्नसे पृथक् २ मंत्र वर्णन करता हूं, जिन मंत्रोंसे मनुष्योंको सुखदायिनी सिद्धि होवेगी ॥ ५१ ॥ प्रत्येक कार्यमें मंत्रार्थ इसी प्रकार है, हे देवि ! हमारे दिये हुए बलिको ग्रहण करो और हे कालाग्निस्वरूपिणि देवि ! शुभाशुभफल प्रगट करो और बलि ग्रहण करे तो कहो ॥ ५२ ॥ अब आगे मंत्र लिखे हैं जिनको साधकजन समझकर यथाकार्यमें उच्चारण करें ॥ इस प्रकार विधिपूर्वक, जो मनुष्य मांस व शहनसहित शिवाको बलिदान करेगा, उसका एकही रात्रिके प्रयोगसे सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध होवें ॥

देवे है ॥५९ ॥ तृतीया तथा त्रयोदशी तिथिमें आकर्षणप्रयोग सिद्ध होवे है । उच्चाटनप्रयोगमें हे वरानने ! द्वितीया तथा षष्ठी तिथि कही हैं ॥ ६० ॥ तथा मोहनप्रयोगमें नवमी व चतुर्दशी सिद्धिदायिनी कही है. एकादशी और द्वादशी मारणमें कही है ॥ ६१ ॥

शिवाबलिविधानं तु कथितं तव शोभने ॥
साधका ये करिष्यन्ति ते भवन्ति च निर्भयाः६२॥
राजद्वारे श्मशाने च नदीवनसमागते ॥
संग्रामभूमौ दुर्गे च ते चरन्ति विनिर्भयाः ॥६३ ॥
ग्रहभूतपिशाचानां शांतिं कुर्यान्महेश्वरि ॥
न मारी न च दुर्भिक्षं यत्र पूज्यः शिवाबलिः॥६४॥

अर्थ–हे शोभने ! यह शिवाबलिविधान हम तुमारेसे कहा, जे साधक इसको करेंगे ते निर्भय हो जाते हैं॥६२॥ राजद्वार और स्मशानमें, नदी तथा वनके बीच व संग्रामभूमिमें, दुर्गमें वे निर्भय विचरते हैं॥६३॥ ग्रह, भूत, पिशाच इनकी शान्ति हे महेश्वरि ! करे जहां शिवाबलिका पूजन

होता है वहां न मारी और न दुर्भिक्ष होता है ॥ ६४ ॥

दुष्टाय च न दातव्यं परविद्यारताय च ॥
देयः शिष्याय पुत्राय शान्ताय गुरुभक्तये ॥६५॥
पूतनाभूतवेताला ह्यपस्मारादयो ज्वराः ॥
न वसन्ति गृहे ह्यस्मिन् यत्र पूज्यः शिवाबलिः ६६
सर्वाबाधा विनश्यन्ति सर्वदुःखं विनाशयेत ॥
सर्वारयो विनश्यंति यत्र पूज्यः शिवाबलिः॥६७॥
सत्यं सत्यं महेशानि मम वाक्यं न संशयः ॥
उड्डीशमुत्तमं तन्त्रं रावणेन प्रभाषितम् ॥ ६८ ॥
इति श्रीलंकापतिरावणविरचिते पार्वतीश्वर-
संवादे उड्डीशतंत्रे दशमः पटलः ॥ १० ॥

अर्थ–यह उड्डीशतंत्र दुष्टके अर्थ नहीं देना तथा परविद्यारतके अर्थ नहीं देना, शिष्यके वा पुत्रके, शांतचित्त तथा गुरुभक्तके अर्थ देना ॥ ६५ ॥ पूतना, भूत, वेताल और अपस्मार (मृगी) आदि ज्वर समस्त यह नहीं बसते हैं जहां कि शिवाबलि पूजन होता है ॥६६॥

सम्पूर्ण बाधायें नाश हो जाती हैं और सब दुःखनाश हो जाते हैं, तथा सम्पूर्ण शत्रु विनाश हो जाते हैं, जहां शिवाका पूजन व बलि होवे है ॥ ६७ ॥ हे शिवे ! सत्य सत्य हमारा वाक्य है, इसमें संशय नहीं, यह उत्तम उड्डीशतंत्र रावणने वर्णन किया है ॥ ६८ ॥

इति श्रीउमामहेश्वरसंवादे लंकापतिरावणविरचिते ज्योतिर्वित्पण्डितनारायणप्रसादमुकुन्दरामाभ्यां विरचितभाषाटीकान्विते इन्द्रजालकौतुकवर्णनो नाम दशमः पटलः ॥१०॥

प्रार्थना ।

समुद्रेषुनिधीन्दुब्दे आश्विनस्यासिते दले ॥
पंचम्यां गुरुवारे च भाषा सम्पूर्णतामगात् ॥ १ ॥
अशुद्धं यत्किंचित्प्रविलिखितमत्राल्पकुधिया ॥
बुधैस्तत्संशोध्यं परमकृपया द्रोहरहितैः ॥
यतो याचे सर्वानखिलगुणविज्ञान्सुविबुधान् ॥
कृपां यूयं दध्वं पदकमलसेवानुशरणः ॥ २ ॥

अर्थ-श्रीमन्महाराजा विक्रमादित्यजीके संवत् १९५४ आश्विनकृष्ण पंचमी गुरुवारके दिन यह उड्डीशतंत्रकी भाषा पं० नारायणप्रसादजी करके पूर्ण करी गई ॥ ॥ १ ॥ यहां इस पुस्तकमें हमारी अल्प बुद्धि करके लिखा गया जो कुछ अशुद्ध रह गया हो सो विद्वज्जन द्वेषरहित होकर अपनी परमदयालुतासे कृपापूर्वक शुद्ध कर लेवें इसीसे सम्पूर्ण गुणोंके ज्ञाता समस्त बुधजनोंके चरणकमलोंकी सेवामें मैं शरण हूं यह हमारी विनयपूर्वक प्रार्थना है.

अस्य ग्रन्थस्य तात्पर्य्यं श्रुत्वा यत्नाद्विलोक्यताम् ॥
उल्लसिष्यंति दुष्यंति सन्तोऽसन्तश्च भूतले ॥२॥

अर्थ-इस ग्रन्थके तात्पर्यको सुनकर और यत्नपूर्वक देखकर पृथिवीमें सन्त जन प्रसन्न होवेंगे और असन्तजन कहिये असज्जन दुःखी होवेंगे ॥ २ ॥

॥ समर्प्पणम् ॥

लक्ष्मीपुरे वरेल्यां च नारायणमुकुन्दयोः ॥
ताभ्यामुड्डीशतंत्रोयं गंगाविष्णोः समर्पितः ॥४॥

अर्थ–लखीमपुर और बांसबरेलीमें संस्कृतपुस्तकालयके स्वामी पंडित नारायणप्रसाद मुकुन्दराम उन दोनोंने, यह उड्डीशतंत्र भाषाटीकासहित श्रीयुत सेठ गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासजीके अर्थ समर्पण करा ॥ ४ ॥

समाप्तोयं ग्रन्थः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना
कल्याण–मुंबई.